पूर्वोत्तर क्षेत्र

समस्या समाधान के प्रयास

भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र लंबे समय से विद्रोह, आंतरिक टकराव तथा उन चुनौतियों का सामना कर रहा है जो जटिल इतिहास, भौगोलिक अलगाव तथा केन्द्र सरकारों द्वारा लगातार कथित 'अनदेखी' से गंभीर हुई हैं, लेकिन इनसे निपटने के प्रयास जारी हैं। यहां प्रमुख समस्या उसकी सीमाओं के भीतर होने वाले आंतरिक टकराव हैं। इसके अनेक कारण हैं जिनमें नस्ली तनाव से लेकर संसाधनों पर विवाद तक शामिल हैं जिनसे हिंसा और विस्थापन के दुष्चक्र पैदा हुए हैं। चीन और दक्षिणपूर्व एशिया से निकट होने के रणनीतिक महत्व से यह प्रतियोगी भू-राजनीतिक हितों के टकराव वाला क्षेत्र रहा है। इससे स्थिति और जटिल होती है। परंपरागत रूप से पूर्वोत्तर में टकराव को भारतीय मुख्यभूमि से जुड़ाव में कमी, निवासियों के बीच कबीलाई व सामुदायिक मतभेद तथा असम सब-डिवीजन में विभाजक रेखाओं से हवा मिलती रही है। इसके साथ ही बाहरी शक्तियां, जैसे चीन, म्यांमार और बांग्लादेश भी यहां अपनी भूमिका निभाती हैं। इस क्षेत्र की समस्याओं के अनेक कारण हैं जो अशांति के रूप में दिखते हैं। अतीत में आर्थिक विकास तथा ढांचागत विकास में कमी से लोगों में हाशियाकरण और वंचना की भावना पैदा हुई जिससे 'विद्रोही आंदोलनों' को निराश नौजवानों को भर्ती करने का मौका मिला। इसके साथ ही खासकर म्यांमार और बांग्लादेश से सटी इस क्षेत्र की सीमाओं पर आवागमन से विद्रोही समूहों को यहां अपने अड्डे बनाने तथा हमारे सुरक्षा बलों पर हमलों का मौका मिला है। बाहरी कारकों द्वारा सीमापार से घुसपैठ तथा विद्रोही समूहों को समर्थन से भारत की सुरक्षा अवस्थापना को लगातार चुनौती मिलती रही है।

पूर्वोत्तर की समस्यायें देश की स्वतंत्रता के बाद से ही गंभीर होती रहीं, लेकिन उन पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया। हालांकि, पिछले एक दशक से केन्द्र सरकार ने पूर्वोत्तर की समस्याओं के आमूल समाधान पर जोर दिया है। प्रधानमंत्री, केन्द्रीय गृह मंत्री तथा अनेक केन्द्रीय मंत्रियों ने इस क्षेत्र का बार-बार दौरा कर विकास परियोजनाओं को गति दी है जिससे इस क्षेत्र की जनता अब स्वयं को बाकी भारत की तरह विकास और प्रगति में भागीदार मानती है। केन्द्र सरकार के प्रयासों से पूर्वोत्तर के विभिन्न 'विद्रोही' समूहों से बातचीत कर उनको मुख्यधारा में लाने में सफलता मिली है। म्यांमार से 'घुसपैठियों' और हथियार तस्करों के प्रवेश पर लगाम लगाने के लिए सीमा पर भारत-बांग्लादेश सीमा की तरह बाड़बंदी की जा रही है। पूर्वोत्तर में दशकों से जारी अशांति के कारण वहां सशस्त्र सेना विशेषाधिकार कानून-अफस्पा लागू रहा है, लेकिन हाल के वर्षों में इसके क्षेत्र में लगातार कमी की गई है। पिछले महीनों में केवल मणिपुर में कुकी और मैतेई समुदायों के बीच टकराव की बड़ी घटना सामने आई है, लेकिन फिलहाल स्थिति शांत है। मणिपुर की समस्या के पीछे 'घुसपैठियों' द्वारा सरकारी जमीनों, वनभूमि तथा बहुसंख्यक मैतेई समुदाय की जमीनों पर अवैध कब्जा था। इसे म्यांमार से आने वाले हथियार तस्करों और नशे के व्यापारियों ने और गंभीर बनाया था। राज्य सरकार ने कड़ाई से जमीनों पर अवैध कब्जों के खिलाफ न केवल अभियान चलाया, बल्कि वह कानून-व्यवस्था पर नियंत्रण करने में भी सफल रही। पूर्वोत्तर राज्यों में असम विकास की नई बुलंदियां छू रहा है और यह अन्य पूर्वोत्तर राज्यों के लिए आदर्श बन गया है। वर्तमान लोकसभा चुनाव में पूर्वोत्तर की जनता ने भारी मतदान कर न केवल भारतीय लोकतंत्र में पूर्ण विश्वास प्रकट किया है, बल्कि उसका देश के साथ ही अपने विकास के प्रति विश्वास भी बढ़ा है।

युवाओं का राजनीति से अलगाव

बड़ी संख्या में मतदाता युवा पीढ़ी के हैं। लेकिन चुनाव प्रक्रिया से उनका अलगाव चिन्ता का विषय है। उनकी सहभागिता बढ़ाने के लिए अनिवार्य मतदान जैसे प्रावधान लागू करने पर विचार होना चाहिए।

प्रफुल्ल गोराडिया
(लेखक, पूर्व राज्यसभा सदस्य हैं)

देश में वर्तमान समय में बड़ी संख्या में मतदाता युवा पीढ़ी के हैं। लेकिन व्यापक रूप से राजनीति तथा उसका अभिन्न अंग मानी जाने वाली चुनाव प्रक्रिया से उनका अलगाव चिन्ता का विषय है। भारतवर्ष का संबंध अधिकाधिक उसके युवा नागरिकों से है। ऐसे में यह तथ्य चिन्ताजनक है कि हाल ही में 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर चुके युवा बड़ी संख्या में मतदान प्रक्रिया से बाहर हैं। इन मतदाताओं में से बहुत कम ने ही मतदाता के रूप में अपना पंजीकरण कराया है। देश का संबंध उन युवाओं से अधिक मजबूत है जिनकी औसत आयु 18 वर्ष है। देश में पिछले लगभग 60 साल में 12 आम चुनाव हुए हैं। मोटेतौर से कहा जाए तो आज पांच साल का बच्चा अपने जीवनकाल में पांच व संभवत: 6 आम चुनाव देखेगा। देश की यह युवा पीढ़ी अपने साथ देश का भविष्य निर्धारित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। लेकिन इस युवा पीढ़ी में 18 वर्ष की मतदान योग्य आयु प्राप्त करने पर मतदान करने की इच्छा तुलनात्मक रूप से काफी कम है।

देश की सर्वाधिक संख्या वाले राज्य उत्तर प्रदेश में मतदान योग्य आयु वाले केवल 25 प्रतिशत नौजवानों ने मतदाताओं के रूप में अपना पंजीकरण कराया है। ऐसे में इसके कारणों पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। आखिर क्या कारण है कि इस पीढ़ी में अपने देश का संचालन करने की इच्छा की कमी है? क्या अधिकांश युवाओं को उम्मीद है कि सरकारी प्रतिनिधि उनसे पुरानी 'माई बाप' शैली में संपर्क करेंगे? अथवा क्या उनको उम्मीद है कि राजनीतिक पार्टियों में उनके वोट प्राप्त करने के लिए ज्यादा प्रतियोगिता नहीं होगी? कहीं ऐसा तो नहीं कि युवा पीढ़ी में पूरी राजनीतिक प्रक्रिया और स्वयं लोकतांत्रिक संस्था के प्रति एक अनिच्छा वाली स्थिति पैदा हो गई है? पिछले वर्षों में देश में युवाओं की बड़ी संख्या ने विश्वास कर लिया है कि सत्ता में चाहे जो आए, उससे उनके जीवन पर कोई असर नहीं पड़ेगा। इसका कारण संभवत: यह है कि देश में राजनेताओं की बड़ी संख्या को ऐसे वर्ग के रूप में देखा जाता है जो केवल अपने हित में ही काम करते हैं। लेकिन इस प्रकार की संदेहवादी भावना अपने मन में पालने वाले युवा भूल जाते हैं कि अपनी निष्क्रियता से वे राष्ट्र के संचालन में अपनी इच्छा प्रकट करने का अधिकार खो देते हैं।

हालांकि, बड़ी संख्या में युवाओं में राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करने तथा देश के जीवन में सार्थक भूमिका निभाने की इच्छा उस सीमा तक बलवती नहीं है जिसकी वर्तमान समय में आवश्यकता है। देश में स्वतंत्रता के लगभग पचास साल पहले से ही राजनीतिक प्रकृति का सार्वजनिक जीवन रहा है। इसकी शुरुआत सेवानिवृत्त ब्रिटिश नौकरशाह एलेन आक्टावियन ह्यूम द्वारा 1885 में कांग्रेस की स्थापना से हुई थी। इसी प्रकार मुस्लिम लीग की स्थापना 1906 में, हिंदू महासभा की 1916 में तथा कम्युनिस्ट पार्टी की 1925 में हुई थी। इस प्रकार भारतीयों को राजनीतिक सार्वजनिक जीवन में प्रवेश का अवसर मिला था। इसके पीछे सत्ता प्राप्त करने का उद्देश्य न होकर, एक आदर्शवाद-संचालित इच्छा थी कि देश को आजाद कराना है। लेकिन विडंबना है कि इसके कुछ ही समय बाद निराशा की भावना फैलने लगी तथा शुरुआती आदर्शवाद में तेजी से कमी आई। आदर्शवाद में इस कमी के साथ ही देश के नैतिक व सामाजिक मूल्यों में पतन भी दिखने लगा। ऐसे में यह सवाल सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि क्या निराशा की इस भावना के पीछे राजनेताओं की गुणवत्ता के प्रति निराशा थी? निश्चित रूप से सभी पार्टियों में ऐसे सदस्य नहीं थे जो समाज के शिक्षित व ज्ञानवान तबकों से आते हों। लेकिन अतीत की तुलना में वर्तमान समय में काफी परिवर्तन आया है। देश की वर्तमान केन्द्र सरकार पहले शासन कर चुकी सरकारों की राजनीतिक अवस्थापना की तरह अधकचरी तथा अनिर्णय की शिकार नहीं है।

हालांकि, वर्तमान केन्द्र सरकार भी अभी राजनेताओं व राजनीति के प्रति जनता में व्याप्त निराशावादी भावनाओं का पूरी तरह निराकरण करने में सक्षम नहीं हुई है और जनता के बड़े हिस्से में पहले से व्याप्त भावनाओं ने जड़ें जमा रखी हैं। लेकिन इसके बावजूद उसने पिछले दशक में काफी परिवर्तन किया है और आज यह कहना उचित नहीं होगा कि अच्छे लोगों की राजनीति में दिलचस्पी नहीं है। राजनीति में दिलचस्पी लेने वालों की संख्या बढ़ी है तथा अच्छे लोग राजनीति में आने लगे हैं। हाल के वर्षों में अनेक अकादमिक और पेशेवर रूप से सक्षम लोग राजनीति में आए हैं और उनमें से कुछ मंत्री भी बने हैं।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की सरकार में अनेक पूर्व वरिष्ठ नौकरशाह तथा विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ मंत्री बने हैं और उन्होंने अतीत के अनेक राजनेताओं की तुलना में बहुत अच्छा काम भी किया है। लेकिन स्पष्ट रूप से अभी हमें इस दिशा में काफी लंबी यात्रा करनी है।

किसी भी निर्वाचन क्षेत्र में बहुत बड़ी संख्या में लोगों की उपस्थिति तथा चुनाव लड़ने के भारी खर्च भी निराशा के कारण हैं। उम्मीद करनी चाहिए कि इस समस्या का काफी समाधान चुनाव क्षेत्रों के नए परिसीमन से हो जाएगा। इससे निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या में लगभग 50 प्रतिशत वृद्धि होगी। इसके साथ ही चुनाव लड़ने पर आने वाला भारी खर्च भी चिन्ता और अधिकांश लोगों में निराशा का कारण है। इसके चलते कोई आम आदमी हर निर्वाचन क्षेत्र में लगभग दो मिलियन मतदाताओं को अपने पक्ष में लाने के लिए बहुत अधिक पैसा नहीं खर्च कर पाता है। यह भी स्पष्ट है कि केवल परिसीमन तथा सीटें बढ़ाने से चुनाव खर्च की समस्या हल नहीं होगी।

अमीर उम्मीदवारों के राजनीति के प्रति आकर्षित होने का एक कारण यह परंपरागत विश्वास भी है कि उम्मीदवार चुनाव खर्च में काला धन प्रयोग करने में सफल होगा और इसके बाद और अधिक मात्रा में काले धन का सृजन करने में भी सफल होगा। लेकिन यदि राजनीति और चुनावी राजनीति में 'भ्रष्टाचार के दरवाजे' बंद हो जाएं तो अवसरवादियों के विभिन्न पार्टियों से या निर्दलीय उम्मीदवार बनने के अवसर कम हो जाएंगे। यह बात उन लोगों के लिए भी सही है जो राजनीति को पैसा कमाने का माध्यम मानते हैं। 'अनिवार्य मतदान' न केवल चुनाव व्यवस्था को अद्यतन बनाने, बल्कि चुनाव लड़ने व चुनाव प्रचार का खर्च घटाने में भी सहायक होगा। अनिवार्य मतदान का प्रावधान करने से 'वोटबैंक' राजनीति चलाते रहना भी असंभव हो जाएगा। अतीत पर गौर करें तो एक समय ऐसा भी था जब कुल मतदान 50 प्रतिशत या इससे भी कम होता था। ऐसे में यदि किसी उम्मीदवार या राजनीतिक पार्टी का सुनिश्चित बोटबैंक होता तो उसे चुनाव जीतने में कोई कठिनाई न होती। हालांकि, वोटबैंक की राजनीति आज भी एक सीमा तक जारी है, पर बदलती परिस्थितियों में इसे ज्यादा लंबे समय तक चलाते रहना कठिन होता जा रहा है। धर्म, जाति, समुदाय, आदि के आधार पर चलने वाली वोटबैंक राजनीति पर पिछले दशक में केन्द्र सरकार द्वारा व्यापक रूप से जमीन पर पहुंचाई जाने वाली कल्याणकारी योजनाओं का व्यापक प्रभाव पड़ा है। इससे एक 'लाभार्थी' समूह विकसित हुआ है जो सभी धर्मों, जातियों व समुदायों तक विस्तारित है और इसने परंपरागत 'वोटबैंक' पर व्यापक प्रहार करने में सफलता पाई है।

मतदान प्रतिशत में वृद्धि के साथ ही प्रतिबद्ध वोटबैंक की शक्ति और प्रभाव घटा है। उदाहरण के लिए, यदि एक लाख मतदाताओं में किसी खास उम्मीदवार का वोटबैंक 25 प्रतिशत या 25,000 मतदाता हैं। ऐसे में यदि उस सीट पर मतदान 50 या 55 प्रतिशत होता है तो यह प्रतिबद्ध वोटबैंक उस उम्मीदवार की विजय सुनिश्चित करता है। लेकिन यदि अनिवार्य मतदान की स्थिति में मतदान 100 प्रतिशत हो तो ऐसे वोटबैंक का कोई निर्णायक लाभ नहीं होगा। राजनीतिक प्रक्रिया में सार्थक सहभागिता के लिए 'खैरातों' की भूमिका पर भी लगाम लगाने की जरूरत है। खैरातों से लोकतंत्र में चुनावों की भूमिका पर व्यापक असर पड़ता है क्योंकि यह 'मतदाताओं को रिश्वत' के सिवा और कुछ नहीं है। यदि यही स्थितियां बनी रहें तो इस बात का कोई अर्थ नहीं होगा कि नौजवान लोग मतदान करने वालों में बड़ी संख्या में क्यों शामिल नहीं होते हैं। नौजवानों को मतदान प्रक्रिया में अधिकाधिक सहभागी बनाने के लिए चुनाव प्रक्रिया के साथ ही राजनेताओं की गुणवत्ता तथा राजनीतिक पार्टियों के कामकाज में भी व्यापक सुधार की आवश्यकता होगी।

नृत्य की सार्वभौमिक भाषा

पारंपरिक भारतीय शास्त्रीय नृत्य रूपों से लेकर समकालीन वैश्विक नृत्य घटनाओं तक, नृत्य समुदायों को प्रेरित, स्वस्थ और एकजुट करता रहता है

राजदीप पाठक
(लेखक, गांधी स्मृति दर्शन समिति के कार्यकारी हैं)

पिछले साल 14 अप्रैल को, भारत के असम में इतिहास रचा गया था, क्योंकि बिहू नर्तकों की सबसे बड़ी सभा के लिए गिनीज वर्ल्ड रिकॉर्ड बनाया गया था। विभिन्न समुदायों और पृष्ठभूमि के 11,000 से अधिक नर्तक असम के पारंपरिक नृत्य करने के लिए एक साथ आए, जिसे प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने लाइव देखा। यह सांस्कृतिक विविधता और एकता का शानदार प्रदर्शन था।

यह कार्यक्रम इस बात का चमकदार उदाहरण था कि सांस्कृतिक विविधता कैसे लोगों को एक साथ ला सकती है और भावनात्मक जुड़ाव और एक-दूसरे की संस्कृति और परंपराओं की सराहना की भावना को बढ़ावा दे सकती है।

अभी हाल ही में कालातीत अनुग्रह और अटूट जुनून के लुभावने प्रदर्शन में राग सेवा के हिस्से के रूप में, 90 वर्षीय अभिनेता-नर्तक और पद्म विभूषण पुरस्कार विजेता वैजयंतीमाला बाली ने अयोध्या में अपने अलौकिक भरतनाट्यम प्रदर्शन से दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। मानवीय अभिव्यक्ति की इस समृद्ध पच्चीकारी में, नृत्य एक कालजयी रत्न के रूप में उभरता है, जो पीढ़ियों पर अपना जादू बिखेरता है और युगों-युगों तक दिलों को लुभाता है। केवल गति से परे, यह रचनात्मकता की एक सिम्फनी का प्रतीक है, जो आत्मा को बेलगाम आनंद से भर देती है। लय और भावना का एक सुंदर अंतर्संबंध, यह आधुनिक जीवन के बोझ से सांत्वना प्रदान करता है, अस्तित्व के ताने-बाने में खुशी के धागों को जोड़ता है।

जीवन की लय में आपका स्वागत है, क्योंकि हम 1982 से हर साल 29 अप्रैल को अंतरराष्ट्रीय नृत्य दिवस मनाते हैं। नृत्य जीवन को बदलने में मदद करता है। नवरस, जिसका उपयोग खुशी, उदासी, प्रेम, क्रोध और कई अन्य भावनाओं को व्यक्त करने के लिए किया जाता है, जीवन का जश्न मनाने और समुदाय की भावना पैदा करने का एक तरीका है।

यह दिवस नृत्य के आंतरिक मूल्य के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देने और नृत्य समुदाय के प्रयासों के व्यापक प्रचार को सुविधाजनक बनाने के उद्देश्य से एक मंच के रूप में कार्य करता है। इसके मिशन के केंद्र में यह आकांक्षा है कि सरकारें और प्रभावशाली हस्तियां नृत्य के महत्व को पहचानेंगी और इसकी खेती के लिए समर्थन बढ़ाएंगी। हम सभी यो-यो मा के सिल्क रोड एन्सेम्बल से परिचित हैं, जो सेलिस्ट यो-यो मा द्वारा स्थापित एक संगीत समूह है, जहां चीन, ईरान, भारत और स्पेन के संगीतकार एक साथ आते हैं और संस्कृतियों के बीच एक पुल बनाने के लिए अपने संगीत का उपयोग करते हैं। विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों के बीच समझ को बढ़ावा देना। सांस्कृतिक सहयोग के माध्यम से, यह सीमाओं के पार विचारों, परंपरा और नवाचार के आदान-प्रदान का एक मंच है।

इसके अलावा, वनबीट पहल, जो दुनिया भर के संगीतकारों को सहयोग करने और नया संगीत बनाने के लिए एक साथ लाती है - को अमेरिकी विदेश विभाग द्वारा वित्त पोषित किया गया था - इसका उद्देश्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देना और संगीतकारों का एक वैश्विक समुदाय बनाना है। %वनबीट% ने सीरिया, रूस और क्यूबा जैसे देशों के संगीतकारों को एक साथ लाया है, न केवल संगीतकारों को अपना संगीत साझा करने के लिए एक मंच प्रदान किया है बल्कि सांस्कृतिक और भाषाई बाधाओं को पार करने वाले नए सहयोग भी तैयार किए हैं। नृत्य अंतरसांस्कृतिक संवाद को बढ़ावा देने में भी मदद करता है। दुनिया भर की नृत्य कंपनियाँ नए कार्य बनाने के लिए एक साथ आती हैं जो उनकी सांस्कृतिक परंपराओं को दर्शाते हैं और सामान्य विषयों का पता लगाते हैं। ऐसा ही एक उदाहरण %एल्विन ऐली अमेरिकन डांस थिएटर% है, जो 60 वर्षों से अधिक समय से नृत्य के माध्यम से विविधता और समावेशन को बढ़ावा दे रहा है। कंपनी के प्रदर्शन अफ़्रीकी-अमेरिकी सांस्कृतिक अनुभव का जश्न मनाते हैं और प्रेम, हानि और पहचान जैसे सार्वभौमिक विषयों का पता लगाते हैं।

इतना ही नहीं, नेशनल बैले ऑफ क्यूबा एक डांस कंपनी है जो अपने प्रदर्शन के जरिए अंतरसांस्कृतिक संवाद को बढ़ावा देती है। 1948 में 20वीं सदी की सबसे प्रसिद्ध बैले नृत्यांगनाओं में से एक, एलिसिया अलोंसो द्वारा स्थापित, यह अपनी अनूठी शैली के लिए जाना जाता है जो एफ्रो-क्यूबा और स्पेनिश नृत्य परंपराओं के साथ शास्त्रीय बैले के तत्वों को जोड़ती है।

भारत में, द कलाक्षेत्र फाउंडेशन, - भारतीय शास्त्रीय नृत्य रूपों को लोकप्रिय बनाने के लिए मौजूद कई फाउंडेशनों और संस्थानों में से - चेन्नई स्थित नृत्य विद्यालय, जिसकी स्थापना 1936 में रुक्मिणी देवी अरुंडेल ने की थी, ने भारतीय शास्त्रीय नृत्य रूपों को पुनर्जीवित करने और बढ़ावा देने की मांग की और आज एक अग्रणी संस्थान है जो छात्रों को भरतनाट्यम, कथकली और कुचिपुड़ी सहित भारतीय शास्त्रीय नृत्य के विभिन्न रूपों में प्रशिक्षित करता है।

इसी तरह, बैंगलोर के पास %नृत्यग्राम डांस विलेज%, जिसकी स्थापना 1990 में प्रसिद्ध भारतीय शास्त्रीय नृत्यांगना प्रोतिमा गौरी ने की थी, एक अनूठी संस्था है जो नृत्य प्रशिक्षण के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है, जो न केवल नृत्य तकनीकों पर ध्यान केंद्रित करती है, बल्कि योग, ध्यान और भारतीय पौराणिक कथाओं जैसे पहलू। संस्थान ने वैश्विक मान्यता प्राप्त की है और भारतीय शास्त्रीय नृत्य को समकालीन नृत्य रूपों के साथ मिश्रित करने वाले नए कार्यों को बनाने के लिए कई अंतरराष्ट्रीय नृत्य कंपनियों के साथ सहयोग किया है।

हम बॉलीवुड डांस को मिस नहीं कर सकते, जो एक वैश्विक घटना बन गई है और इसने विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को एक साथ आने और भारत की जीवंत संस्कृति का जश्न मनाने के लिए एक मंच तैयार किया है। भारतीय शास्त्रीय रूपों से लेकर बैले तक विभिन्न नृत्य शैलियों का उपयोग करना; कैबरे के लिए, हिप-हॉप, ब्रेक डांस इत्यादि - प्रत्येक चरण में एक अद्वितीय लय समाहित होती है

आप की बात

कांग्रेस की असलियत

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि जब तक वे ज़िंदा हैं धर्म के आधार पर आरक्षण नहीं होने देंगे। उनकी बात बिल्कुल सही है। धर्म के आधार पर आरक्षण क्यों, जबकि देश भारतीय संविधान से चलता है? संवैधानिक प्रक्रिया के अनुसार हर व्यक्ति, समूह, सम्प्रदाय व समाज के हर वर्ग को सुविधाएं देना भारत सरकार का कर्तव्य है। एक तरफ कांग्रेस देश के संविधान पर खतरे की बात करती है, वहीं दूसरी और मनमाने ढंग से कर्नाटक में संविधान को ताक पर रखकर मुसलमानों को आरक्षण देने का प्रयास कर रही है। मोदी का यह कहना सही है कि संविधान पर खतरे की बात करने वाली कांग्रेस ने ही संविधान के साथ सबसे ज्यादा छेड़छाड़ की है। इतिहास गवाह है कि आपातकाल में संविधान को आमूल रूप से बदलने का कुत्सित प्रयास किया गया था तथा जनता के मूलाधिकारों तक को स्थगित कर पूरे देश को कैदखाने में बदल दिया गया था। देश की जनता भूली नहीं है कि-इंदिरा इज़ इंडिया एंड इंडिया इज़ इंदिरा का नारा देने वाली कांग्रेस स्वयं को हमेशा देश के कानून और आम जनता से ऊपर मानती रही है। उसने पूरी बेशर्मी से नेहरू-गांधी परिवार को ही भारत रत्न समेत सर्वोच्च पुरस्कारों से नवाजा था। आज जनता कांग्रेस की असलियत अच्छी तरह समझ गई है।

- **शकुंतला महेश नेनावा,** इंदौर

मोदी की गारंटी

जब देश का प्रधानमंत्री अच्छा, ईमानदार, देशभक्त हो और केवल अपने देश के हित में सोचता हो तो फिर वह देश तो तरक्की करेगा ही। हमारे देश को भी ऐसा ही प्रधानमंत्री मिला है जिसने पिछले दस साल में सारे देश को अपना परिवार माना है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जनता को विश्वास दिलाया है कि जब तक वह प्रधानमंत्री है तब तक देश में धर्म के आधार पर आरक्षण नहीं चलने दिया जाएगा। प्रधानमंत्री का यह निर्णय सबके लिए लाभदायक होगा। कांग्रेस, सपा, बसपा जैसी अनेक पार्टियां धर्म के आधार पर मुसलमानों को आरक्षण की पक्षधर हैं, भले ही इससे हिंदू दलितों, आदिवासियों व ओबीसी को कितना ही नुकसान क्यों न हो। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी तथा संघ प्रमुख मोहन भागवत ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जब तक आवश्यक हो तब तक एससी, एसटी व ओबीसी का आरक्षण जारी रहेगा। मोदी ने बार-बार कहा है कि स्वयं बाबा साहेब अंबेडकर भी इस स्थिति को बदल नहीं सकते हैं। ऐसे में आरक्षण के सवाल पर कांग्रेस व अन्य विपक्षी दलों द्वारा मोदी व अमित शाह तथा अन्य भाजपा नेताओं के फेक वीडियो का मुकाबला करना और जवाब देना सभी जागरूक लोगों का कर्तव्य ही नहीं, दायित्व भी है।

- **एमएम राजावत,** शाजापुर

कमाई पर नजर

सैम पित्रोदा के पैतृक संपत्ति में 55 परसेंट सरकार द्वारा ले लिए जाने के संबंध में दिए बयान की तरह सुप्रीमकोर्ट में भी ऐसे ही एक याचिका पर विचार चल रहा है। ऐसा लगता है कि कांग्रेस पार्टी की नजर जनता की कमाई पर है। हालांकि, सरकार की अनेक टैक्सों से काफी आमदनी हो रही है, पर इसके बावजूद खासकर कांग्रेस की नजर जनता के धन पर लगी रहती है। सभी तरह के टैक्स चुका कर कठोर परिश्रम से एकत्र किए गए धन पर कांग्रेस या किसी अन्य पार्टी की फिर से कुंडली मारने की मंशा स्वीकार करने योग्य नहीं है। हालांकि, भाजपा सरकार ने विगत वर्षों में मध्य वर्ग को राहत देने के प्रयास किए हैं तथा कार्पोरेट कर को भी वैश्विक स्तर पर ले आई है। कांग्रेस ने ऐसे में संपत्ति के पुनर्वितरण के नाम पर इंदिरा गांधी युग के स्टेट ड्यूटी टैक्स या मृत्यु कर जैसे करों की वापसी के संकेत दिए हैं जिनसे देश की अर्थव्यवस्था को कोई लाभ नहीं मिला था। देश के मध्य वर्ग तथा खासकर पढ़े-लिखे नौजवानों को वोट के माध्यम से जनता की कमाई पर नजर रखने वाली ऐसी नकारात्मक प्रवृत्तियों का डट कर विरोध करना होगा। यदि कहीं दुर्भाग्य से विपक्षी गठबंधन सत्ता में वापस आ गया तो वह देश को फिर से अंधकार में धकेल देगा।

- **विभूति बुपक्या,** खाचरोद

ममता की घोषणायें

तृणमूल कांग्रेस ने अपना चुनाव घोषणापत्र जारी किया है। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी की पार्टी ने वादा किया है कि वह बंगाल में सीएए, एनआरसी और समान नागरिक संहिता कानून लागू नहीं होने देंगी। टीएमसी का यह घोषणापत्र संविधान की मूल अवधारणा और संघीय ढांचे की अवहेलना करता है। यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि कोई पार्टी खुले आम संविधान की इस तरह धज्जियां उड़ा रही है। स्पष्ट है कि टीएमसी किस वर्ग को लुभाना चाह रही है। वह अवैध घुसपैठियों की हिमायत कर राष्ट्रीय सुरक्षा व्यवस्था को खुलेआम खतरे में डालने का प्रयास कर रही है। आश्चर्य है कि संविधान-विरोधी वादे करने वाले इस चुनाव घोषणापत्र पर चुनाव आयोग ने अब तक कोई कार्रवाई नहीं की है। देश में संविधान की शपथ लेकर चुनाव में भाग लेने वाले किसी राजनीतिक दल को यह अधिकार नहीं है कि वह संसद द्वारा पास तथा राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत कानून को देश के किसी भाग में लागू न करने की बात करे। इससे अधिक देशद्रोह की बात भला और क्या हो सकती है। विपक्षी दल इस पर चुप क्यों हैं?

- **अंकित सोनी,** मनावर

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।

दैनिक जागरण

निरंतर प्रयास ही सफलता की कुंजी है

फर्जी वीडियो

गृहमंत्री अमित शाह के फर्जी वीडियो के सहारे उनके खिलाफ दुष्प्रचार करने और गलत नैरेटिव फैलाने की कोशिश कोई नई बात नहीं। इस तरह की हरकतें होती ही रहती हैं। चूंकि इस समय चुनाव चल रहे हैं, इसलिए फर्जी, संदर्भ से काटकर और अर्थ का अनर्थ करने वाले गलत तरीके से संपादित किए गए वीडियो आने का सिलसिला शायद ही थमे। किसी को बदनाम करने के लिए फर्जी वीडियो प्रचारित-प्रसारित करने का सिलसिला इसीलिए तेज होता जा रहा है, क्योंकि यह काम करने वाला पूरा एक तंत्र खड़ा हो चुका है। इसी कारण दुनिया भर में फेक न्यूज एक बड़ी समस्या बन गई है। इसका कारण तकनीक का दुरुपयोग रोकने के लिए पर्याप्त उपाय न करना और दोषी लोगों को कठोर दंड न दिया जाना है। आम तौर पर जब किसी नेता के फर्जी वीडियो पर कोई कार्रवाई होती है तो विरोधी दल के लोग यह शोर मचाने लगते हैं कि विरोधियों का दमन किया जा रहा है। कुछ तो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की आड़ लेने लगते हैं।

हालांकि समय-समय पर सभी दलों के नेता फर्जी खबरों, फोटो, वीडियो का शिकार बनते रहते हैं, लेकिन जब उन्हें प्रचारित-प्रसारित करने वालों के खिलाफ पुलिस कोई कदम उठाती है तो राजनीतिक कारणों से आरोपित का बचाव किया जाने लगता है। कभी-कभी तो ऐसे तत्वों के प्रति अदालतें भी नरम रवैया अपना लेती हैं। इसका परिणाम यह है कि फोटो, वीडियो में छेड़छाड़ कर भ्रम फैलाने वालों के दुस्साहस पर लगाम नहीं लग पा रही है। यह इसलिए चिंता की बात है, क्योंकि अब एआइ का सहारा लेकर ऐसे वीडियो बनाए जाने लगे हैं, जिनके साथ की गई छेड़छाड़ का पता लगाना कठिन होता है। इस तरह के वीडियो बनाकर कलाकारों और नेताओं को बदनाम करने के मामले बढ़ रहे हैं। इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि तकनीक का दुरुपयोग करके जनमत और साथ ही चुनावों को प्रभावित करने का काम सुनियोजित तरीके से होने लगा है। कैंब्रिज एनालिटिका का मामला ऐसा ही था। ऐसे मामले इसीलिए सामने आते हैं, क्योंकि सोशल नेटवर्क प्लेटफार्म संचालित करने वाली कंपनियां उनका दुरुपयोग रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाने से इन्कार कर रही हैं। कई बार तो वे शिकायत के बाद भी मानहानिकारक या फिर कानून एवं व्यवस्था के लिए खतरा बनने वाले फर्जी वीडियो प्रसारित करने वालों के खिलाफ कार्रवाई नहीं करतीं। फर्जी खबरें राजनीति और सामाजिक सद्भाव के साथ शासन तंत्र के लिए भी खतरा हैं। यह खतरा दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। अच्छा हो कि राजनीतिक दलों में इस खतरे से निपटने के उपायों को लेकर सहमति बने। यह समझा जाना चाहिए कि लोकतंत्र के समक्ष जो नए खतरे उभरे हैं, उनमें फर्जी खबरें, फोटो और वीडियो भी हैं। आधुनिक तकनीक एक वरदान है, लेकिन यदि उसका दुरुपयोग नहीं थमा तो वह अभिशाप भी बन सकती है।

पवित्र अभियान

जाति, वर्ग का भेदभाव खत्म करने की दिशा में अखाड़ों ने बहुत पहले से ही कार्य करना शुरू कर दिया था और इसी की परिणति है कि वंचित समाज के कई संत महामंडलेश्वर का दर्जा पा चुके हैं, लेकिन प्रयागराज में जूना अखाड़े ने इसी समाज के महेंद्रानंद गिरि को जगद्गुरु का सम्मानित पद सौंपकर एक पवित्र अभियान की ओर कदम बढ़ाया है। यह पहल इसलिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि हिंदू धर्म विरोधी कई ताकतें इस समय तेजी से मतांतरण के प्रयासों में जुटी हैं और उनके निशाने पर वंचित समाज और आदिवासी ही हैं जो लोभ-भय, सामाजिक उपेक्षा व सरकारी सुविधाओं से वंचित होने के कारण दूसरे धर्म अपना लेते हैं। जूना अखाड़े ने वंचित और आदिवासी समाज के 52 और संतों को महामंडलेश्वर बनाने का निर्णय किया है जिसकी प्रशंसा की जानी चाहिए। यह पहल सामाजिक विघटन रोकने में मील का पत्थर साबित होगी और अन्य अखाड़ों को भी समाज के सभी वर्गों को साथ लेकर चलने की प्रेरणा मिलेगी। आने वाले कुंभ में इस तरह के और कार्यक्रम देखने को मिल सकते हैं। वंचित समाज के लोगों की महामंडलेश्वर और जगद्गुरु जैसे सम्मानित पदों पर प्रतिष्ठा सनातन धर्म के समयानुकूल बदलाव का द्योतक है। यह सनातन धर्म की उदात्तता ही है कि उसके दरवाजे समाज के सभी वर्ग के लोगों के लिए खुलते हैं। इसके मूल में है कि कोई भी पद जाति से नहीं योग्यता से मिलना चाहिए। महामंडलेश्वर पद पाना आसान नहीं है। इसके लिए संतों को कड़ी परीक्षा से गुजरना होता है। घर-परिवार से दूर रहकर भक्ति व त्याग वाली दिनचर्या अपनानी होती है। महेंद्रानंद गिरि अनुसूचित जाति के पहले जगद्गुरु हैं जिनको इस पद से सम्मानित कर जूना अखाड़े ने इस पूरे समाज को बराबरी का संदेश दिया है। उपेक्षितों को सम्मान देकर ही हम अपने साथ रख सकते हैं।

भारतीय लोकतंत्र को लांछित करने का अभियान

श्रीराम चौलिया

भारत में चुनाव प्रक्रिया एवं शासन व्यवस्था में कुछ सुधार आवश्यक हैं, पर हमारी उपलब्धियों को अनदेखा कर मनगढ़ंत आरोप लगाना एक सुनियोजित षड्यंत्र है

अवधेश राजपूत

देश में जारी लोकसभा चुनाव जिस बड़े पैमाने पर आयोजित हो रहे हैं, वह विश्व के सामने एक मिसाल है। दुनिया में ऐसा कोई देश नहीं है, जहां करीब 97 करोड़ मतदाता हों, दो हजार आठ सौ राजनीतिक दल कड़ी प्रतिस्पर्धा में हों, 55 लाख ईवीएम हों, जिनसे छेड़छाड़ नहीं की जा सकती, साढ़े दस लाख मतदान केंद्र हों, जहां अधिकतर शांतिपूर्वक और बिना धांधली के मतदान हो और चुनाव परिणाम की विश्वसनीयता पर हारने वाले उम्मीदवार अथवा दल भी स्वीकृति देते हों। इतने बड़े पैमाने पर आज तक इतिहास में कभी भी लोकतांत्रिक स्वेच्छा का प्रदर्शन नहीं देखा गया। अगर इस कीर्तिमान को कोई तोड़ेगा भी तो उस देश का नाम भारत ही होगा। हम ही अपने आप द्वारा स्थापित ऊंचाइयों से ऊपर जाने की सामर्थ्य रखते हैं।

विश्व में लोकतंत्र की साख कायम रखने में भारत सबसे प्रबल दायित्व निभा रहा है। हम आज उस कालखंड में हैं, जहां चीन जैसे शक्तिशाली देश में तानाशाही का बोलबाला बढ़ रहा है और अमेरिका जैसा लोकतांत्रिक महारथी राजनीतिक ध्रुवीकरण और आत्मसंदेह में फंसा है। अगर हम शासन व्यवस्थाओं के वैश्विक संतुलन का जायजा लें तो वह खतरनाक ढंग से तानाशाही के पक्ष में झुक रहा है और फिर भी भारत लोकतंत्र की लौ को जलाए हुए है। मौजूदा लोकसभा चुनाव इसका परिचायक है। दुनिया भर में लोग देख सकते हैं कि तेज गति से आर्थिक प्रगति करते विशाल देश भारत का लोकतंत्र कितना मजबूत और गहरा है। वे आश्वस्त हो सकते हैं कि सफलता और समृद्धि के लिए चीन की राह पर जाना अनिवार्य नहीं है। इन अकाट्य तथ्यों के बावजूद पश्चिम के उदारवादी पत्रकार और राजनीतिक विश्लेषक भारत में कथित 'लोकतांत्रिक पथभ्रष्टता' और पतन पर निरंतर दुष्प्रचार अभियान चला रहे हैं। भारत में चुनाव प्रक्रिया के प्रति जनसाधारण में आस्था के तमाम जमीनी प्रमाणों को जानबूझकर अनदेखा करके इन छिद्रान्वेषी आलोचकों ने लगातार लांछन लगाने और यह माहौल बनाने का प्रयास किया है कि भारत पीछे की ओर जा रहा है। उदाहरण के लिए कुछ खबरों और लेखों के शीर्षक देखें-'मोदी का निरंकुशता की ओर झुकावः कैसे मोदी भारत को निरंकुशता में बदलने के लिए हिंदू धर्म का उपयोग कर रहे हैं' (फारेन पालिसी)। 'मोदी का भारत वह स्थान है, जहां वैश्विक लोकतंत्र खत्म हो जाता है।' (न्यूयार्क टाइम्स)। 'इस साल भारत के चुनाव अपनी 'अलोकतांत्रिक प्रकृति' के साथ सामने आए हैं।' 'मोदी लोकतंत्र को चुनावी अधिनायकवाद में बदल रहे हैं।' (लि मांडे)। 'भारत में कानून के शासन का क्या हुआ?' (द एटलांटिक)। 'क्या मोदी ने भारतीय लोकतंत्र को उसके टूटने के बिंदु से आगे धकेल दिया है?' (न्यू यार्कर)। 'नरेन्द्र मोदी की हिंदू राष्ट्रवादी सरकार नागरिक अधिकारों पर अपना हमला बढ़ा रही है।' (द गार्डियन)

मोदी सरकार के साथ भारत के निंदक टिप्पणीकारों एवं संपादकों के लक्षणों को समझना आवश्यक है। ये वस्तुगत सच्चाई के बजाय एक छोटे अभिजात्य वर्ग की सर्वसम्मति और आरामकुर्सी पर हासिल कथित ज्ञान के आधार पर लिखते और बोलते हैं। ब्रिटेन के राजनीतिशास्त्री एड्रियन पेबस्ट ने 'उदार लोकतंत्र के राक्षस' नामक पुस्तक में इनकी पोल खोली है। उन्होंने दिखाया है कि पश्चिमी उदारवादी 'आम लोगों के मूल्यों के प्रति अत्यधिक अलोकतांत्रिक और असहिष्णु हैं' और उनका लक्ष्य है 'सत्ता और धन को संकीर्ण और गैरजिम्मेदार अभिजात्य वर्ग के हाथों में केंद्रित करना।' वे न केवल भारत जैसे सक्रिय लोकतंत्र पर अंगुली उठाते हैं, बल्कि अपने देशों में रूढ़िवादी और दक्षिणपंथी सरकारों एवं नेताओं में अलोकतांत्रिक प्रवृत्तियां हावी होने का आरोप लगाते हैं। जहां भी उदारवादी धड़े के अनुसार राजनीति और समाज नहीं झुकते, वहां इस धड़े के लोग उन्हें पिछड़ता हुआ दिखाने को अपना कर्तव्य समझने लगते हैं। हालांकि उदारवादी और रूढ़िवादी, दोनों ही लोकतांत्रिक दायरे के अंदर रहते हैं, लेकिन कुछ विशेषज्ञों को केवल उदारवादी ही लोकतांत्रिक नजर आते हैं और बाकी सबको वे अलोकतंत्रवादी या लोकलुभावनवादी करार देते हैं। इनमें सामान्य जनता की समझ को स्वीकार करने की जैसी अनिच्छा और असहिष्णुता है, उससे साफ जाहिर है कि ये गैरलोकतांत्रिक मानसिकता के शिकार हैं और इनमें विशेषाधिकार की यह भावना है कि पूरे विश्व को उनके पसंदीदा पथ पर ही चलना चाहिए। भारतीय विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने ऐसे लोगों के बारे में उचित ही कहा कि उन्हें लगता है कि वे सिर्फ पर्यवेक्षक ही नहीं, बल्कि 'हमारे चुनाव में राजनीतिक खिलाड़ी भी हैं और वे एक ऐसा एक वैश्विक खेल खेल रहे हैं, जिसमें उन्हें घुसपैठ करनी होगी।'

चूंकि प्रधानमंत्री मोदी ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, प्राचीन विरासत और विकास पर जोर देकर जनमानस का समर्थन जुटाया है, इसलिए उदारवादी विदेशी समीक्षकों में गहरी हताशा है। दुर्भाग्यवश हमारे अपने विपक्षी नेताओं और वाम-उदार बुद्धिजीवियों के साथ इन अंतरराष्ट्रीय पत्रकारों और टिप्पणीकारों की साठगांठ है। राहुल गांधी का यह कथन विदेशी आलोचकों की भाषा से न केवल मिलता-जुलता है, बल्कि उन्हें प्रभावित भी करता है कि वर्तमान आम चुनाव 'लोकतंत्र और संविधान को बचाने के लिए अंतिम अवसर हैं, क्योंकि मोदी उसे नष्ट करने की कोशिश कर रहे हैं।' दूसरे देशों में बसे भारतीय मूल के कुछ कथित उदारवादी विचारक भी इस गठजोड़ में शामिल हैं और उन्हें उन देशों में वरीयता तभी मिलती है, जब वे मोदी की हाय-हाय करते दिखें और भारत की बुराई करते रहें।

विश्व के प्रत्येक लोकतंत्र में त्रुटियां होती हैं और कोई भी देश दोषहीन नहीं हो सकता। भारत में भी चुनावी प्रक्रिया एवं शासन व्यवस्था में लगातार सुधार जरूरी हैं और अभी हमारा लोकतंत्र सर्वाधिक उत्कृष्ट स्तर पर नहीं पहुंचा है, लेकिन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हमारी जो उपलब्धियां हैं, उन्हें अनदेखा करके मनगढ़ंत आरोप लगाना और भारत की छवि को मलिन करना एक सुनियोजित षड्यंत्र का हिस्सा है। इसका भंडाफोड़ साधारण भारतीय मतदाता तो करेंगे ही, हमारे तार्किक, राष्ट्रवादी बुद्धिजीवियों को भी चाहिए कि वे वास्तविकता दिखाते रहें।

(लेखक ओपी जिंदल ग्लोबल यूनिवर्सिटी के जिंदल इंडिया इंस्टीट्यूट के महानिदेशक हैं)

response@jagran.com

मनचाहे आरोपों की राजनीति

राजीव सचान

कांग्रेस के घोषणा पत्र के साथ भाजपा वही कर रही, जो उसने सीएए और कृषि कानूनों को लेकर किया था

सत्तापक्ष-विपक्ष में आरोपों की बौछार। फाइल

कांग्रेस के इस आरोप में दम है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी न्याय पत्र नाम वाले उसके घोषणा पत्र की मनचाही व्याख्या कर रहे हैं और उसमें तो वैसा कुछ लिखा ही नहीं, जिसका वह उल्लेख कर रहे हैं। बीते कुछ दिनों से मोदी यह कहकर कांग्रेस को घेर रहे हैं कि वह लोगों की जमीन-जायदाद और यहां तक कि महिलाओं का सोना-चांदी और उनके मंगलसूत्र के बारे में जानकारी जुटाकर उन्हें अपने पसंदीदा वोट बैंक को बांटने का इरादा रखती है। मोदी यह भी कह रहे हैं कि कांग्रेस एससी-एसटी और ओबीसी आरक्षण में कटौती कर मुस्लिम समुदाय को देना चाहती है। उन्हें यह कहने का मौका इसलिए मिल गया, क्योंकि कर्नाटक सरकार ने राज्य के समस्त मुस्लिम समुदाय को पिछड़ा मानकर ओबीसी आरक्षण में शामिल कर दिया। इस पर राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग ने आपत्ति भी जताई है। भाजपा को संपत्ति के पुनर्वितरण करने का आरोप लगाकर कांग्रेस को घेरने का मौका उसके घोषणा पत्र के इस बिंदु से मिला कि वह संपत्ति का सर्वे कराएगी। रही-सही कसर सैम पित्रोदा ने यह कहकर पूरी कर दी कि भारत को अमेरिका जैसे विरासत टैक्स पर बहस करनी चाहिए।

कांग्रेस सफाई देते-देते परेशान है, लेकिन मोदी और उनके सहयोगी अपने आरोप बार-बार दोहरा रहे हैं। कांग्रेस का इससे परेशान होना स्वाभाविक है, लेकिन बहुत समय नहीं हुआ, जब कांग्रेस के साथ विपक्षी दलों के अन्य अनेक नेता देश को यह समझाने में लगे हुए थे कि यदि नागरिकता संशोधन कानून यानी सीएए लागू हुआ तो देश के मुसलमानों की नागरिकता छीन ली जाएगी। इसका दुष्प्रचार इतना अधिक किया गया कि दिल्ली के साथ देश के अनेक हिस्सों में लोग सड़कों पर उतरे, बड़े पैमाने पर हिंसा हुई और उसमें करोड़ों की सरकारी और गैर-सरकारी संपत्ति स्वाहा हो गई। कुछ लोगों की जान भी गई। दिल्ली में 50 से अधिक लोगों की जान लेने वाले दंगे सीएए विरोधी शाहीन बाग धरने के लंबा खिंचने का ही नतीजा थे। याद करें कि इस धरने को संबोधित करने कौन-कौन विपक्षी नेता जाते थे और वहां क्या-क्या कहते थे? शाहीन बाग धरने के चलते दिल्ली को नोएडा से जोड़ने वाली एक व्यस्त सड़क जबरन अवरुद्ध कर दी गई थी, लेकिन किसी को दिल्ली-एनसीआर के आम लोगों को हो रही परेशानी की परवाह नहीं थी।

कुछ दिनों पहले सीएए के नियम अधिसूचित कर दिए गए, लेकिन शायद ही कोई उनके विरोध में उतरा हो, क्योंकि सभी को यह समझ आ गया था कि चार वर्ष पहले उन्हें बरगलाया गया था। तब विपक्षी नेताओं को सीएए की मनमानी व्याख्या करने का मौका इसलिए मिल गया था, क्योंकि उसमें पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान से भारत आए मुसलमानों को इन देशों का बहुसंख्यक होने के नाते नागरिकता देने का प्रविधान नहीं था। विपक्षी नेताओं को सीएए के जरिये भारत के मुसलमानों की नागरिकता छीने जाने का सनसनीखेज आरोप लगाने का अवसर भी इसलिए मिल गया था, क्योंकि इस कानून के बाद राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर यानी एनआरसी लाने की चर्चा हो रही थी। हालांकि एनआरसी के मसौदे का अता-पता नहीं था, लेकिन विपक्षी नेताओं ने यही बताया कि देश के मुसलमानों को पहले एनआरसी से बाहर किया जाएगा, फिर सीएए के प्रविधान के तहत उनकी नागरिकता छीन ली जाएगी। लोगों को भड़काने और सड़कों पर उतारने के लिए यह पर्याप्त था।

भाजपा की ओर से अपने घोषणा पत्र की मनमानी व्याख्या से कांग्रेस का परेशान होना स्वाभाविक है, पर जब कांग्रेस के साथ अन्य विपक्षी दलों के नेता कृषि कानूनों की मनचाही व्याख्या कर रहे थे तो भाजपा के साथ दिल्ली-एनसीआर और हरियाणा एवं पंजाब के लोग भी बहुत परेशान हुए थे। तब इन कानूनों के विरोध में विपक्षी दलों के सहयोग-समर्थन से उत्साहित किसान संगठन राजमार्गों को घेरकर बैठ गए थे। वे करीब एक वर्ष तक दिल्ली को घेरकर बैठे रहे। इससे करोड़ों लोग परेशान हुए और अरबों रुपये का नुकसान हुआ। तब कांग्रेस समेत विपक्ष को आनंद आ रहा था, क्योंकि सरकार किसान नेताओं के निशाने पर थी और वह उन्हें संतुष्ट नहीं कर पा रही थी। इसलिए नहीं कर पा रही थी, क्योंकि किसान संगठनों के साथ विपक्षी दल यही बताने में लगे थे कि कृषि कानूनों का मूल उद्देश्य किसानों की जमीन छीनना है। कृषि कानूनों की ऐसी व्याख्या का कोई आधार न था, लेकिन विपक्ष ने यह तय कर लिया था कि उसे किसानों को यही समझाना है कि इन कानूनों से उनके खेत खतरे में हैं। तब विपक्षी दलों के साथ कथित किसान संगठनों के नेता भी अपना राजनीतिक हित देख रहे थे। एक ऐसा ही संगठन पंजाब के विधानसभा चुनावों में उतरा और उस समय किसान नेता बने योगेंद्र यादव का उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों के बाद कहना था कि हमने तो विपक्षी दलों के लिए पिच तैयार की थी, लेकिन यदि वे उसका फायदा नहीं उठा सके तो हमारा क्या दोष?

यदि कोई इस नतीजे पर पहुंच रहा है कि भाजपा कांग्रेस के घोषणा पत्र की मनचाही व्याख्या कर रही है तो वह गलत नहीं, लेकिन उसे इस नतीजे पर भी पहुंचना होगा कि तीन-चार वर्ष पहले कांग्रेस समेत अन्य विपक्षी दल सीएए और कृषि कानूनों की मनमानी व्याख्या कर रहे थे। चूंकि राजनीतिक दलों ने एक-दूसरे की नीतियों को लेकर उन पर मनचाहे आरोपों की बौछार करने की सुविधा हासिल कर रखी है, इसलिए चुनावों के दौरान आदर्श चुनाव संहिता प्रभावी नहीं दिखती। आदर्श चुनाव संहिता तब प्रभावी होगी, जब कोई आदर्श राजनीतिक संहिता भी होगी।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

अच्छाई की राह

अच्छे व्यक्ति का साथ हो तो सद्गुणों का विकास होता है। इससे व्यक्ति विनम्र बन जाता है। जबकि बुरे की संगति में व्यक्ति उद्दंड बन जाता है। हमारे निकट लोगों के जीवन में झांकने से प्रतीत होगा कि अच्छे लोगों के सान्निध्य से जिस किसी में उद्दंडता थी, उसमें विनम्रता आ गई। उसकी बुराइयों पर भी विराम लग गया। जहां संगति अच्छी नहीं होती, वहां विनम्र व्यक्ति भी उद्दंड बन जाता है।

हमारे दैनिक जीवन में चलने वाले अप्रत्यक्ष संग्राम को किसी हथियार से नहीं, बल्कि अपने भीतर छिपी शक्ति से ही जीता जा सकता है। स्वामी विवेकानंद के इस कथन के अनुसार कि जब प्रेरणा भीतर से आएगी, तभी आप अच्छाई की ओर उन्मुख हो सकेंगे। यह मत सोचें कि आप अच्छे नहीं बन सकते हैं। कन्फ्यूशियस ने कहा है कि महान व्यक्ति जिन चीजों को ढूंढ़ते हैं, वे उन्हें अपने भीतर ही प्राप्त हो जाती हैं। कमजोर ही दूसरों का मुंह ताकते हैं। आचार्य महाप्रज्ञ ने भी कहा है कि आत्मप्रेरित इंसान कभी खाली नहीं बैठ सकता। वह खुद को और दूसरों को भी सुखी बनाता है।

एक व्यक्ति प्रकृति से विनम्र है, किंतु उसे गलत सीख मिली कि तुम बड़े आदमी हो, तुम्हारे पास बहुत धन है, तुम्हें क्या करने की जरूरत है, ऐसी गलत सीख देकर उसे अहंकारी बना दिया जाता हैं। जो अहंकारी बन जाता है, वह पतन की राह पर बढ़ जाता है। पतन का सबसे सरल मार्ग है-अहंकारी हो जाना। बुराई के रास्ते तो हर मोड़ पर मिल जाते हैं, परंतु अच्छाई का रास्ता भीतर से होकर ही निकलता है। इसलिए स्वयं से स्वयं का साक्षात्कार आवश्यक है। जब आपको अंदर से अच्छा बनने की प्रेरणा मिलती है तो आपको संभावनाओं का अनंत आकाश नजर आता है। इस प्रेरणा के कारण ही आप ज्यादा से ज्यादा अच्छा बनने को उत्सुक होते हैं। यह अंदरूनी प्रेरणा सफलता के निकट ले जाती है।

ललित गर्ग

महिलाओं को भी मिले पुरुषों के समान वेतन

सुनीता मिश्रा

हमारे देश में निजी नौकरियों में विभिन्न पदों के लिए वेतनमान तय नहीं हैं, जैसा कि सरकारी नौकरियों में होता है

माना जा रहा है कि पिछले पांच वर्षों से जिस श्रम संहिता (लेबर कोड) के लागू होने का इंतजार किया जा रहा है, उसे नई सरकार बनने के कुछ महीनों के भीतर ही लागू किया जा सकता है। इसमें लेबर कोड से जुड़े सभी चार पार्ट को एक पार्ट में ही लागू किया जाएगा। लेबर कोड के चार पार्ट में वेतन संहिता, 2019, औद्योगिक संबंधी संहिता, 2020, सामाजिक सुरक्षा संहिता, 2020 और व्यावसायिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य और कार्य स्थिति संहिता, 2020 शामिल हैं। इसके तहत न्यूनतम वेतन काम की स्थिति, भौगोलिक स्थिति और कुशलता की जरूरतों को ध्यान में रखकर तय होंगे। जिससे कंपनियों को महिला कामगारों को पुरुष कामगारों के जैसा काम करने पर समान वेतन देना होगा। महिला कर्मचारी नाइट शिफ्ट में भी काम कर सकेंगी। इसके अलावा एक निश्चित अवधि के लिए काम करने वाली महिला कर्मियों को भी स्थायी कर्मियों की भांति सुविधाएं दी जाएंगी। साथ ही कंपनियों को मातृत्व अवकाश की सुविधा के साथ नर्सिंग सुविधा और आफिस में क्रेच की सुविधा भी मुहैया करानी होगी।

महिलाओं को जगह-जगह भेदभाव सहना पड़ता है। महिलाएं पुरुषों जैसा काम करती हैं, जबकि उनके जैसा वेतन नहीं पाती हैं। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आइएलओ) के अनुसार वैश्विक स्तर पर महिलाओं को पुरुषों की तुलना में 20 प्रतिशत वेतन कम मिलता है। महिलाओं और पुरुषों के वेतन में समानता दुनिया के किसी भी देश में नहीं है। चीन, अमेरिका, जापान, दक्षिण कोरिया, संयुक्त अरब अमीरात, स्वीडन, पुर्तगाल और रूस जैसे कई देश इसमें शामिल हैं। इस अंतर के लिए दुनिया के तमाम देशों में उनकी परिस्थितियों के हिसाब से अलग-अलग कारण जिम्मेदार माने गए हैं। लेकिन हमारे देश में महिलाओं और पुरुषों के वेतन में जो असमानता है, उसकी जड़ें सामाजिक मान्यताओं में ही निहित हैं।

हमारे देश में निजी नौकरियों में विभिन्न पदों के लिए वेतनमान तय नहीं हैं, जैसा कि सरकारी नौकरियों में होता है। इसलिए एक ही कंपनी में एक ही जैसा काम करने वाले महिला और पुरुष का वेतन अलग-अलग होता है। इसका खामियाजा सबसे अधिक महिलाओं को भुगतना पड़ता है। कई बार अपनी निजी समस्याओं और परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण महिलाओं को अधिक काम के बदले कम वेतन लेने को मजबूर होना पड़ता है। इन तमाम कारणों से महिलाओं और पुरुषों के वेतन में अंतर है। ऐसे में लेबर कोड लागू होने के बाद महिलाओं को आगे बढ़ने के कई अवसर मिलेंगे। समान कार्य के लिए समान वेतन मिलने पर उनके साथ भेदभाव नहीं होगा। वे कंपनियों में अपने अधिकार के लिए लड़ सकेंगी और अदालत का दरवाजा खटखटा सकेंगी।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

आत्ममंथन करे कांग्रेस

'सूरत के बाद इंदौर' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय टिप्पणी में पढ़ा कि आम चुनाव के लिए कांग्रेस की रणनीति कितनी लचर रही है। अब तो पार्टी में आंतरिक स्तर पर ही चुनावी रणनीति को लेकर सवाल उठने लगे हैं। पार्टी अगर इतने महत्वपूर्ण चुनाव के लिए अपने प्रत्याशी ही ढंग से नहीं चयन कर पा रही तो वह सत्तारूढ़ भाजपा को किस प्रकार चुनौती पेश कर पाएगी। इससे पहले कई सीटों पर ऐसी बातें सामने आ चुकी हैं कि पार्टी के प्रत्याशी ने ही चुनाव लड़ने से इन्कार कर दिया तो कहीं टिकट दिए जाने पर ही विरोध शुरू हो गया, जैसे कि जयपुर। राजधानी दिल्ली भी कांग्रेस की लचर रणनीति का एक बड़ा उदाहरण है, जहां बड़ी मशक्कत के बाद कांग्रेस ने आम आदमी पार्टी के साथ गठबंधन किया, लेकिन प्रत्याशी उतारने में बहुत देर कर दी और जब उम्मीदवार उतारे तो ऐसे कि प्रदेश इकाई के अध्यक्ष अरविंदर सिंह लवली ही अपने पद से इस्तीफा देकर चलते बने। ये किसी भी लिहाज से कांग्रेस के लिए शुभ संकेत नहीं। इससे चुनाव में उतरने से पहले ही कार्यकर्ताओं का मनोबल प्रभावित होगा। कांग्रेस को आत्ममंथन कर अपनी रणनीति बदलनी होगी। अन्यथा उसकी चुनावी संभावनाएं अच्छी नहीं दिख रहीं।

गुंजन शर्मा, कमला नगर-नई दिल्ली

गैर जरूरी खर्च पर लगे रोक

'आंकड़ों के अभाव में असंतुलित विमर्श' शीर्षक से लिखे आलेख में शिवाकांत शर्मा ने गैर-जिम्मेदाराना लोकलुभावन वादों के नुकसान से हमें अवगत कराया है। साथ ही इसकी आवश्यकता जताई है कि अन्य देशों की तरह हमारे देश में कोई ऐसी स्वास्थ्य संस्था होनी चाहिए। जो यह बता सके कि विभिन्न सरकारों के गैर जरूरी खर्च कौन-कौन से हैं और इन खर्चों का दूरगामी असर अर्थव्यवस्था पर क्या पड़ेगा? बकायदा उन्होंने अपने आलेख में मौजूदा सरकार के पांच किलो मुफ्त अनाज वितरित करने सहित कांग्रेस के घोषणा पत्र में किए गए उन वादों पर भी सवाल उठाया है। जिससे राजस्व की हानि की आशंका अधिक है बजाय उन नीतियों के अमल में लाने से सरकार की अधिक आमदनी होगी। फिर ऐसी दशा में बुनियादी ढांचे के विकास के लिए विभिन्न राज्य सरकारें एवं केंद्र के पास धन कहां से आएगा? आलेख बेहद विद्वतापूर्ण है एवं सुधी पाठकों, नीति नियंताओं की आंखें खोलने वाला है। मगर दुर्भाग्यपूर्ण है कि एन-केन-प्रकारेण चुनाव जीतने की ललक में किसी को इन महीन बातों पर ध्यान देने की फुरसत कहां है? लेकिन समय आएगा। हम सबको इस विषय पर सोचना होगा। तभी बेरोजगारी, गरीबी एवं महंगाई से निजात पाने की उम्मीद कर सकते हैं। आखिर अर्थव्यवस्था का समग्र विकास होगा। तभी तो लोगों को रोजगार मिलेगा, गरीबी दूर होगी, महंगाई से निजात मिल सकेंगे।

मुकेश कुमार मनन, पटना

न्यायिक स्वतंत्रता जरूरी

'न्यायपालिका की गरिमा पर आघात' शीर्षक आलेख में सीबीपी श्रीवास्तव ने न्यायपालिका की गरिमा और स्वतंत्रता पर मंडराते खतरे के बारे में अपना विचार प्रस्तुत किया है। कोर्ट के फैसले को सम्मानपूर्वक लेना आवश्यक है। न्यायपालिका का सम्मान हमारे लोकतंत्र की गरिमा का हिस्सा है। यह दुखद है कि राजनीतिक विचारों के कारण न्यायपालिका के फैसलों को विवादास्पद बनाया जा रहा है। कोर्ट के फैसलों की आलोचना करना लोकतंत्र के लिए जरूरी है, लेकिन वह आलोचना सकारात्मक और उचित होनी चाहिए। राजनीतिक स्वार्थ के लिए कोर्ट के फैसलों पर सवाल उठाने से न्यायपालिका की विश्वसनीयता पर आघात होता है। वकीलों और नेताओं को यह समझना चाहिए कि कोर्ट का हर फैसला उनके अनुसार नहीं हो सकता, फिर भी न्यायपालिका की मर्यादा और गरिमा का सम्मान करना चाहिए। समाज को भी कोर्ट के फैसलों के पीछे की विधियों और तथ्यों को समझने की आवश्यकता है। कोर्ट के फैसलों पर बिना उचित आधार के आरोप लगाना अनुचित है।

awanishg30@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

अभिषेक कुमार सिंह
संस्था टेली परफार्मेंस से संबद्ध

आजकल

खाद्य पदार्थों में मिलावट चिंताजनक

पिछले दिनों सिंगापुर एवं हांगकांग के फूड सेफ्टी विभाग ने दो भारतीय ब्रांडों के कुछ मसाला उत्पादों को जांच में नाकाम होने पर अपने यहां प्रयोग से रोक दिया। उसने इनमें कैंसरजनक तत्व जैसे कि एथिलीन आक्साइड की जरूरत से ज्यादा मात्रा पाने का दावा किया। हालांकि इन प्रतिबंधों पर केंद्र सरकार ने संबंधित देशों से स्पष्टीकरण मांगा है, लेकिन इसमें दो राय नहीं कि इसकी ज्यादा फिक्र खुद हमें करनी होगी जिससे कि भारतीय खानपान का गौरव एवं स्वास्थ्य बोध कायम रहे

पूरी दुनिया में सदियों से रही है भारतीय मसालों की धूम। प्रतीकात्मक

पंद्रहवीं सदी के आखिर में पुर्तगाली नाविक वास्को डी गामा जिन सुगंधित मसालों की खोज में यूरोप से एक व्यापारिक मार्ग पर निकला था, वह उसे केप आफ गुड होप यानी अफ्रीका के दक्षिणी कोने से होते हुए भारत ले आया था। इस तरह वास्को डी गामा ने भारत की खोज नहीं की थी, बल्कि भारतीय मसालों को दुनिया भर में पहुंचाने जैसा महत्वपूर्ण कार्य किया था। भारतीय मसालों की धूम दुनिया में सदियों से रही है। इसी के बल पर विश्व भारतीय खानपान की मुरीद रहा है, लेकिन इधर जब से यह खबर आई है कि कुछ भारतीय मसाला कंपनियों एवरेस्ट एवं एमडीएच के कुछ उत्पादों के प्रयोग पर सिंगापुर और हांगकांग में रोक लगा दिया गया तो हमारी यह प्रतिष्ठा धूमिल होती दिख रही है। हालांकि इन प्रतिबंधों पर भारत सरकार ने संबंधित देशों से स्पष्टीकरण मांगा है, लेकिन इसमें दो राय नहीं कि इसकी ज्यादा फिक्र खुद हमें करनी होगी जिससे कि भारतीय खानपान का गौरव कायम रहे। ध्यातव्य है कि खानपान में ऊंच-नीच की यह समस्या सिर्फ मसालों तक सीमित नहीं है, बल्कि कुछ बेबी फूड से लेकर दवाओं तक में सेहत को नुकसान पहुंचाने वाले तत्वों की मिलावट ने देश-दुनिया में चिंता का माहौल बना दिया है।

कैंसर पैदा करने वाले तत्व : पिछले दिनों सिंगापुर और हांगकांग के फूड सेफ्टी विभाग ने दो बड़े भारतीय ब्रांडों के चार मसाला उत्पादों-मद्रास करी पाउडर, सांभर मसाला मिक्स्ड मसाला पाउडर, करी पाउडर मिक्स्ड मसाला और फिश करी मसाला पाउडर को नमूना जांच में नाकाम होने पर प्रतिबंधित करने का एलान कर दिया। उसने इनमें कैंसर पैदा करने वाले तत्व-एथिलीन आक्साइड की जरूरत से ज्यादा मात्रा होने का दावा किया। एथिलीन आक्साइड जैसे कीटनाशक को इंसानों में कैंसर पैदा करने वाले कारक के रूप में देखा जाता है। इसे कैंसरजनक ग्रुप-एक में रखा जाता है। नेशनल कैंसर इंस्टीट्यूट के मुताबिक इस ग्रुप में वे तत्व रखे जाते हैं जिनसे कैंसर होने की पुष्टि हो चुकी है। हांगकांग के फूड सेफ्टी विभाग ने इन उत्पादों में इस कैंसरजनक एजेंट की मात्रा तय सीमा से ज्यादा मिलने का दावा किया है। नेशनल कैंसर इंस्टीट्यूट के अनुसार एथिलीन आक्साइड के संपर्क में आने और खाने-पीने के सामानों के जरिये लंबे समय तक इसके सेवन से कई तरह के कैंसर होने का खतरा ज्यादा रहता है।

सेहत से जुड़े इन्हीं खतरों को देखते हुए कहा जा रहा है कि सिंगापुर के फूड सेफ्टी विभाग ने संबंधित कंपनियों से प्रतिबंधित किए गए इन उत्पादों को अपने बाजार से वापस लेने को कहा है। अंतरराष्ट्रीय बाजार में किसी भारतीय मसाला उत्पाद में ऐसी गड़बड़ी मिलने का यह कोई पहला मौका नहीं है। पिछले वर्ष अमेरिका के फूड एंड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन (एफडीए) ने भी एक नामी भारतीय मसाला कंपनी से अपने कई उत्पाद वापस लेने को कहा था। एफडीए के मुताबिक उक्त भारतीय ब्रांड के मसाले में सैलमोनेल्ला नामक हानिकारक बैक्टीरिया की मौजूदगी पाई गई थी। सोचा जा सकता है कि जब निर्यात किए जा रहे खाद्य पदार्थों में हानिकारक तत्वों की मौजूदगी को लेकर कुछ कंपनियां सचेत नहीं हैं तो फिर देश के भीतर ही बेचे जा रहे उत्पादों में वे कितनी सतर्कता बरतती होंगी। इसका गंभीर पक्ष यह है कि यूरोप-अमेरिका के मुकाबले भारत के निगरानी तंत्र, कानूनी माहौल और दंडकारी व्यवस्था को अपेक्षाकृत लचीला और कमजोर मानने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियां तक देश में बेचे जा रहे उत्पादों के स्वास्थ्य संबंधी मानकों की अनदेखी कर रही हैं। हाल में एक एफएमसीजी कंपनी नेस्ले के भारत में बिकने वाले बेबी फूड प्रोडक्ट में शक्कर यानी शुगर की अतिरिक्त मात्रा पाई गई है।

नवजात में मजं बढ़ती शुगर : हाल में स्विट्जरलैंड के इंटरनेशनल बेबी फूड एक्शन नेटवर्क (आइबीएफएएन) ने अपनी एक रिपोर्ट में दावा किया है कि बहुराष्ट्रीय कंपनी नेस्ले भारत सहित एशिया और अफ्रीका के कई देशों में बिकने वाले बच्चों के दूध और सेरेलेक जैसे बेबी फूड प्रोडक्ट्स में अतिरिक्त शक्कर और शहद मिलाती है। हालांकि इस रिपोर्ट के प्रकाशन के बाद उक्त कंपनी ने कहा है कि वह स्थानीय कानूनों और अंतरराष्ट्रीय मानकों का पालन करती है, लेकिन खाद्य पदार्थों में विटामिन, खनिजों और अन्य पोषक तत्वों के साथ-साथ उनमें खतरनाक रसायन और अन्य तत्वों की उपस्थिति को लेकर ज्यादातर कंपनियां पारदर्शी नहीं हैं। ऐसा कहने के पीछे कारण यह है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन के दिशानिर्देशों में स्पष्ट किया गया है कि तीन साल से कम उम्र के बच्चों के भोजन में शुगर या मीठे पदार्थों का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन ऐसा न करके कुछ कंपनियां स्थानीय कानूनों और अंतरराष्ट्रीय मानकों का उल्लंघन कर रही हैं। आइबीएफएएन की रिपोर्ट के सामने आने के बाद फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड्स अथारिटी आफ इंडिया (एफएसएसएआइ) ने विज्ञानियों का एक पैनल बनाकर देश में बेबी फूड बिकने वाले सभी ब्रांड के उत्पादों की जांच करने और नियमों का सख्ती से पालन नहीं करने वाली कंपनियों पर कार्रवाई करने की बात कही है।

मानकों की अनदेखी और हेराफेरी : इस पर हैरानी नहीं होनी चाहिए कि मामला चाहे स्वदेशी कंपनियों का हो या बहुराष्ट्रीय कंपनियों का, अमेरिका-यूरोप के मुकाबले एशिया-अफ्रीका आदि गरीब और विकासशील देशों में बेचे जा रहे उनके उत्पादों की गुणवत्ता में जमीन-आसमान का फर्क दिखता है। कोई उत्पाद अमेरिका-यूरोप में बेचा जा रहा है कि किसी गरीब एशियाई देश में, कंपनियां इस आधार पर यह भेदभाव बरतती हैं। बेबी फूड प्रोडक्ट को ही उदाहरण के तौर पर लें तो रिपोर्ट में नवजात बच्चों के लिए बेचे जाने वाले मिल्क पाउडर में औसतन दो ग्राम शुगर एशियाई और अफ्रीकी देशों में मिला पाया गया है। जबकि इसी उत्पाद को स्विट्जरलैंड, जर्मनी, ब्रिटेन और फ्रांस आदि यूरोपीय देशों में जांचा गया तो वहां इसमें शुगर की कोई मात्रा नहीं मिली थी। उल्लेखनीय है कि नवजात बच्चों के खानपान में शुगर शामिल होने से उनमें उच्च रक्तचाप, दिल की बीमारी, डायबिटीज, अल्जाइमर जैसे रोगों का खतरा बढ़ जाता है। इससे उनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है, दांतों में सड़न की समस्या पैदा होती है और मानसिक सेहत पर बुरा असर पड़ता है। यही वजह है कि यूरोप और अमेरिका में नवजात बच्चों के खाद्य पदार्थों में शक्कर के इस्तेमाल की इजाजत नहीं है।

हालांकि इस मामले में एक कमजोरी स्थानीय कानूनों की भी है। जैसे भारत में बेबी फूड प्रोडक्ट में अतिरिक्त शक्कर की मात्रा की कोई सीमा तय नहीं की गई है। ऐसे मामलों को नियंत्रित करने वाली संस्था एफएसएसएआइ खाद्य पदार्थों में सिर्फ प्रोटीन, फैट, कार्बोहाइड्रेट, आयरन और जिंक जैसे मैक्रोन्यूट्रिएंट्स और विटामिन सी, डी की मात्रा की जांच करती है। इस छूट का फायदा कुछ देसी और बहुराष्ट्रीय कंपनियां उठाती हैं और भारतीय नियमों के मुताबिक, अनाज वाले बेबी फूड में कार्न सिरप और माल्ट का इस्तेमाल करती हैं। सेहत के लिहाज से इस अंतर को खतरनाक मानने वाले विशेषज्ञों का मत है कि न सिर्फ विदेश भेजे जा रहे खाद्यान्नों, अनाजों और मसालों की गुणवत्ता के मानकों को लेकर हमें सख्ती दिखानी होगी, बल्कि इनसे जुड़े स्थानीय कानूनों, नियमों और निगरानी के उपायों में भी कड़ाई बरतनी होगी, ताकि लोगों की सेहत से खिलवाड़ न हो सके। भारत जिस तरह से फैटी लिवर, डायबिटीज, मोटापे और दिल की बीमारियों के मामले में वैश्विक राजधानी बनने की कगार पर है, देखना होगा कि कहीं ऐसा इसलिए तो नहीं हो रहा है कि हमारे खानपान से जुड़ी छूट का फायदा उठाकर खाद्य उत्पाद बनाने वाली कुछ कंपनियां अपने मुनाफे के लिए खतरनाक रसायन, कीटनाशक और शुगर आदि की अतिरिक्त मात्रा हमारी रगों में भर रही हैं।

सेहत पर भारी पड़ता भ्रामक प्रचार

एक मसला तो खाद्य पदार्थों में हानिकारक तत्वों की मिलावट का है, दूसरा मसला उनके भ्रामक प्रचार का है, जो कम खतरनाक नहीं है। यानी खाने-पीने की किसी चीज की जो ताकत या हैसियत नहीं है, विज्ञापनों में उसे बढ़ाकर या बिल्कुल ही अलग श्रेणी में डालकर प्रचारित किया जाता है। यह सरासर धोखाधड़ी है जिस पर गत दिनों भारत के वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय की नजर गई तो उसने सभी ई-कामर्स कंपनियों से कहा कि वे अपनी वेबसाइटों से सभी पेय पदार्थों को 'हेल्थ ड्रिंक' की कैटेगरी से हटा दें। मंत्रालय ने इससे संबंधित अधिसूचना में राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग की जांच का हवाला दिया और कहा कि 'हेल्थ ड्रिंक्स की परिभाषा वह नहीं है, जो इन विज्ञापनों में बताई जाती है।' राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग ने पिछले साल कथित तौर पर एक ऐसी ही हेल्थ ड्रिंक बनाने वाली कंपनी को नोटिस भेजा था। उसमें कहा गया था कि इस प्रोडक्ट में काफी मात्रा में शुगर होने की शिकायत है। उसमें कुछ ऐसे तत्व भी हैं, जो बच्चों की सेहत को नुकसान पहुंचा सकते हैं। लिहाजा कंपनी अपने प्रोडक्ट के सभी भ्रामक विज्ञापनों, पैकेजिंग और लेबल की समीक्षा करे और उन्हें वापस ले। इस आपत्ति के बाद उस कंपनी ने अपने मशहूर पेय को 'स्वास्थ्यवर्धक भोजन पेय (हेल्थ फूड ड्रिंक्स)' की जगह अब 'कार्यात्मक पोषण पेय (फंक्शनल न्यूट्रिशनल ड्रिंक्स)' घोषित किया है।

भारत में एनर्जी और स्पोर्ट्स ड्रिंक्स का मौजूदा बाजार 4.7 अरब डालर का है, जिसमें 2028 तक 5.71 प्रतिशत बढ़ोतरी का अनुमान है। यही वजह है कि ग्राहकों को लुभाने के लिए कुछ कंपनियां आकर्षक शब्दजाल में फंसाकर अपना कारोबार बढ़ाना चाहती हैं, लेकिन यह तो नियामक संस्थाओं और खुद आम जनता को तय करना होगा कि वे झांसा देने वाले विज्ञापनों के जाल में फंसते हैं या ऐसे भ्रामक दावे करने वाली कंपनियों पर लगाम लगाते हैं।

-अभिषेक कुमार सिंह

खरी-खरी

चुनावों में वोट कटवा उम्मीदवार

डा. प्रदीप मिश्र

चुनावों में ऐसे उम्मीदवारों की बहुतायत होती है, जिन्हें अड़े हुए उम्मीदवार कहा जाता है। उन्हें वोट कटवा की संज्ञा भी दी जाती है। वे खुद जीतने के लिए नहीं, बल्कि प्रत्याशी विशेष को हराने के लिए खड़े होते हैं। उनका उद्देश्य स्वयं की सद्गति नहीं, बल्कि अगले की दुर्गति होता है। पार्टी उनकी औकात जानती है, इसलिए उन्हें टिकट नहीं देती। फिर वे पार्टी के उम्मीदवार के खिलाफ अड़े हुए उम्मीदवार के रूप में पर्चा दाखिल कर देते हैं। पार्टी उन्हें तत्काल बाहर का रास्ता दिखला देती है। वे भी अपने शीर्षस्थ नेताओं को गालियां देने से नहीं चूकते।

एक अड़े हुए प्रत्याशी से साक्षात्कार लेना चाहा तो वे बोले, 'घंटा भर रुक जाओ, अपनी भूतपूर्व पार्टी के कुछ वोट और निपोर लें फिर बात करते हैं।' और वे वोट निपोरने के लिए निकल लिए। ठीक घंटा भर बाद वे मेरे सामने थे। मैंने पूछा, 'ये वोट निपोरना क्या होता है?' 'यह एक गहरी प्रक्रिया है। निपोरस का गणित पाइथागोरस के गणित से भी कठिन होता है।' 'थोड़ा प्रकाश डालें।' 'हम वोटरों से कहते हैं कि हमें वोट दो न दो, पर उस फलनवा को बिल्कुल मत देना। भले हमारी जमानत जब्त हो जाए, पर फलनवा न जीतने पाए।' 'इससे फायदा क्या है आपको?' 'हारने पर उसका राजनीतिक करियर समाप्त हो जाना है। उसकी खंडहर हुई पालिटिक्स पर, हम अपनी राजनीति की बुलंद इमारत खड़ी करेंगे।'

'आपने तो पार्टी छोड़ दी है, फिर वापस कैसे होंगे?' 'अरे हम कौन से धर्मराज हैं कि एक बार निकले तो साधु, सूरमा और गजदंत की तरह हमेशा के लिए निकल लिए। हमारी राजनीति में वसंत ऋतु आते ही हम तुरंत पार्टी में लौट आएंगे। अरे जिन लोगों के कहने पर हमने पार्टी छोड़ी है, वे ही हमें ससम्मान पार्टी में लौटाएंगे।' 'आपके मित्रगण अभी पार्टी के अंदर ही हैं?' 'बंधुवर, ये निपोरस पालिटिक्स आपको नहीं समझ पड़ेगी। इसका गणित अत्यंत टेढ़ा है।' यकीनन निपोरस-थ्योरम, पाइथागोरस-थ्योरम से ज्यादा मुश्किल है।

पोस्ट

यह भी क्या संयोग है कि जनवरी में इंदौर एवं सूरत को शहरों के स्वच्छता सर्वेक्षण का संयुक्त विजेता घोषित किया गया था और अप्रैल में दोनों शहरों ने कांग्रेस प्रत्याशी को अपने यहां से साफ कर दिया।
निष्ठा अनुश्री@nishthaanushree

इंदौर में कांग्रेस उम्मीदवार का भाजपा प्रत्याशी के पक्ष में नामांकन वापस लेना शर्म की बात है। यह प्रमाणित करता है कि हमारी चयन प्रक्रिया में कमियां हैं। हमें प्रतिबद्ध कांग्रेसी को टिकट देना चाहिए था।
अनिल शास्त्री@anilkshastri

यह समय की मांग है कि प्रज्वल रमन्ना पर ऐसी कार्रवाई हो कि दुनिया याद रखे। साथ ही यह भी समय की मांग है कि वे तथाकथित प्रगतिशील दल, नेता, बुद्धिजीवी आदि अपनी जुबान बंद रखें, जो शाहजहां शेख को अपना माई-बाप बनाकर बैठे थे।
अभिषेक उपाध्याय@upadhyayabhii

टी-20 के अंतरराष्ट्रीय गेंदबाजों में रवि बिश्नोई की छठी रैंकिंग है, लेकिन इसके बावजूद उनका चयन नहीं किया गया। वहीं, भारतीय टीम के लिए रिंकू सिंह के हालिया प्रदर्शन को भी अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए था। ये फैसले पचाना कुछ मुश्किल है।
इरफान पठान@IrfanPathan

प्रमोद भार्गव
वरिष्ठ पत्रकार

सिंधु जल बंटवारे पर पुनर्विचार की जरूरत

पाकिस्तान के संघीय कानून मंत्री आजम नजीर तरार ने एक बयान में कहा है कि सिंधु जल संधि की शर्तों के मुताबिक भारत को रावी नदी के पानी के उपयोग का पूरा अधिकार है। यह संधि पाकिस्तान को कानूनी रूप से बाध्य करती है कि वह पड़ोसी देश की जल आक्रामकता के खिलाफ अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में न जाए। तरार ने पाकिस्तानी संसद में भारत द्वारा पिछले साल भेजे गए एक नोटिस के जबाव में यह बात कही है। भारत ने उसे यह नोटिस सिंधु जल संधि के तहत बन रही भारत की पनबिजली परियोजनाओं पर आपत्ति जताने के लिए भेजा था। आरंभ से ही भारत की यह कोशिश रही है कि पाकिस्तान सिंधु जल संधि के संदर्भ में जिन मुद्दों को उठाता रहा है, उन्हें उदारतापूर्वक सुलझा लिया जाए। इस विवाद की शुरुआत 2015 में हुई थी, जब पाकिस्तान ने भारत की तरफ से किशनगंगा पर निर्माणाधीन पनबिजली परियोजनाओं पर आपत्ति जताई थी। जबकि समझौते के तहत भारत बिजली उत्पादन के लिए इन नदियों के पानी का प्रयोग कर सकता है।

विश्व बैंक की मध्यस्थता में 19 सितंबर, 1960 को तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और पाकिस्तानी राष्ट्रपति अयूब खान ने सिंधु जल संधि पर हस्ताक्षर किए थे। इसके अंतर्गत पूर्वी क्षेत्र की तीन नदियों व्यास, रावी एवं सतलज की जल राशि पर नियंत्रण भारत के सुपुर्द किया था और पश्चिमी क्षेत्र की नदियों सिंधु, चिनाब एवं झेलम पर नियंत्रण की जिम्मेदारी पाकिस्तान को सौंपी गई थी। इसके तहत भारत के ऊपरी हिस्से में बहने वाली इन छह नदियों का 80.52 यानी 167.2 अरब घन मीटर पानी पाकिस्तान को हर साल दिया जाता है। जबकि भारत के हिस्से में महज 19.48 प्रतिशत पानी ही शेष रह जाता है। नदियों की ऊपरी धारा (भारत में बहने वाले पानी) के जल बंटवारे में उदारता की ऐसी अनूठी मिसाल दुनिया के किसी भी अन्य जल समझौते में देखने में नहीं आई है। इसीलिए अमेरिका की विदेश मामलों से संबंधित समिति ने 2011 में दावा किया था कि यह संधि दुनिया की सफलतम संधियों में से एक है, लेकिन

पाकिस्तान पोषित आतंकवाद को करारा जवाब देने के लिए भारत सिंधु जल संधि का कूटनीतिक अस्त्र के रूप में करे इस्तेमाल। प्रतीकात्मक

यह संधि केवल इसलिए सफल है, क्योंकि भारत संधियों की शर्तों को निभाने के प्रति अब तक उदार एवं प्रतिबद्ध बना हुआ है। जबकि जम्मू-कश्मीर को हर साल इस संधि के पालन में 60 हजार करोड़ रुपये का नुकसान उठाना पड़ता है। भारत की भूमि पर इन नदियों का अकूत जल भंडार होने के बावजूद इस संधि के चलते इस राज्य को बिजली नहीं मिल पा रही है। यह संधि दुनिया की ऐसी इकलौती अंतर्देशीय जल संधि है, जिसमें सीमित संप्रभुता का सिद्धांत लागू होता है। और संधि की असमान शर्तों के चलते ऊपरी जलधारा वाला देश नीचे की ओर प्रवाहित होने वाली जलधारा वाले देश पाकिस्तान के लिए अपने हितों की अनदेखी करता है। इतनी पाकिस्तान हितकारी संधि होने के बावजूद पाकिस्तान ने भारत की उदारता का उत्तर पूरे जम्मू-कश्मीर क्षेत्र में आतंकी हमलों के रूप में दिया है।

पाकिस्तान की प्रकृति हमेशा से ही धोखा देने की रही है। भारत ने जब झेलम की सहायक नदी किशनगंगा पर बनने वाली किशनगंगा जल विद्युत परियोजना की बुनियाद रखी तो पाकिस्तान ने नीदरलैंड में स्थित अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता न्यायालय में आपत्ति दर्ज करा दी। हालांकि न्यायालय ने भारत को परियोजना निर्माण की अनुमति तो दे दी, लेकिन भारत को बाध्य किया कि वह रन आफ द रिवर प्रणाली के तहत नदियों का प्रवाह निरंतर जारी रखे। फैसले के मुताबिक किशनगंगा नदी में पूरे साल हर समय नौ क्यूसेक मीटर प्रति सेंकेड का न्यूनतम जल प्रवाह जारी रहेगा। किशनगंगा को पाकिस्तान में नीलम नदी के नाम से जाना जाता है। न्यायालय के फैसले के परिप्रेक्ष्य में प्रश्न यह खड़ा होता है कि यदि किसी साल पानी कम बरसता है और किशनगंगा नदी बांध में पानी छोड़ने के लायक रह ही नहीं जाता है तो रन आफ द रिवर प्रणाली का सिद्धांत अमल में कैसे लाया जाएगा? इस दृष्टि से यह फैसला सिंधु जल संधि की संकीर्ण व्याख्या है। कालांतर में पाकिस्तान को यदि इस फैसले के मुताबिक पानी नहीं मिलता है तो उसे यह कहने का मौका मिलेगा कि भारत मध्यस्थता न्यायालय के आदेश का सम्मान नहीं कर रहा है। इसलिए भारत को सिंधु जल बंटवारे पर पुनर्विचार की जरूरत है।

शिमला समझौते में स्पष्ट उल्लेख है कि पाकिस्तान अपनी जमीन से भारत के खिलाफ आतंकवाद को फैलाने की इजाजत नहीं देगा। किंतु पाकिस्तान इस समझौते का खुला उल्लंघन कर रहा है। लिहाजा पाकिस्तान को उसी की भाषा में जवाब देने के नजरिये से भारत को सिंधु जल संधि को ठुकरा कर पानी को हथियार के रूप में इस्तेमाल करने की जरूरत है। पाकिस्तान की 2.6 लाख एकड़ कृषि भूमि इन्हीं नदियों के जल से सिंचित होती है। उसके पेयजल का भी प्रमुख स्रोत ये नदियां ही हैं। यदि भारत कूटनीतिक पहल करते हुए इन नदियों का जल अवरुद्ध कर दे तो पाकिस्तान की कमर टूट जाएगी। इस संधि के चलते जम्मू-कश्मीर की जनता को पानी के उपयोग के मौलिक अधिकार से भी वंचित होना पड़ रहा है। इसलिए पाकिस्तान के आतंक को माकूल जवाब देने के लिए भारत सरकार को सिंधु जल संधि को कूटनीतिक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल करने की जरूरत है।

जागरण जनमत कल का परिणाम

क्या अरविंदर सिंह लवली का दिल्ली प्रदेश अध्यक्ष पद से इस्तीफा राजधानी में कांग्रेस की चुनावी संभावनाएं खराब करेगा?

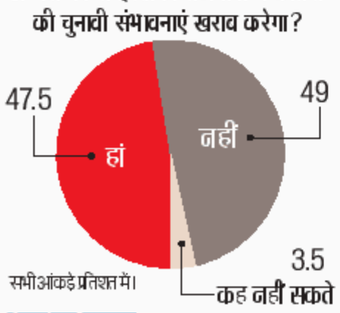

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल
क्या टी-20 विश्व कप के लिए चयनित टीम संतुलित है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

जेडीएस पर लग गया रेवन्ना का दाग,
अब तो ऐन चुनाव में फैलेगी यह आग।
फैलेगी यह आग जलाएगी यह इज्जत,
बिगड़ा हुआ चरित्र कराए भारी हुज्जत।
देता तुरत बिगाड़ मिला जो वर्षों में यश,
भुगत रहा है आज परिस्थिति वह जेडीएस।
- ओमप्रकाश तिवारी

पंजाब डायरी

आमजन की बढ़ती परेशानी

इन्द्रप्रीत सिंह
ब्यूरो प्रमुख, पंजाब

पिछले 15 दिनों से शंभू रेलवे ट्रैक कुछ किसानों ने बंद कर रखा है। न्यूनतम समर्थन मूल्य को कानूनी गारंटी देने को लेकर कुछ किसान संगठनों और केंद्र सरकार के बीच हुई पांच बैठकों में भी सहमति नहीं बन पाई। अब जबकि पिछले डेढ़ महीने से देश में आचार संहिता लागू है और जून में केंद्र में नई सरकार बननी है ऐसे में भी कुछ किसान संगठन अपनी जिद नहीं छोड़ रहे हैं और वे रेल मार्ग को जाम करके बैठे हैं। चुनाव के चलते सख्ती से उन्हें उठाने की इच्छाशक्ति कोई भी पार्टी नहीं दिखा रही है, लेकिन इससे आम जन, व्यापारियों और विद्यार्थियों को कितना नुकसान हो रहा है इसका सहज ही आकलन किया जा सकता है।

हैरानी की बात यह है कि इतना सब होने के बावजूद कुछ किसानों का यह रुख चुनाव का मुद्दा नहीं बन पा रहा है। लगता है आज भी किसान और किसानी राजनीतिक पार्टियों के एजेंडे में नहीं हैं। खेती का कौन-सा माडल लागू हो इसको लेकर कोई बहस नहीं हो रही है। राजनीतिक पार्टियां एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप तो लगा रही हैं, लेकिन इन मसलों का समाधान क्या हो इस पर कोई चर्चा नहीं हो रही है। भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष सुनील जाखड़ ने मुख्यमंत्री भगवंत मान से कहा है कि आप तो हेलीकाप्टर के जरिये इधर-उधर उड़कर चले जाते हो इसलिए आपको व्यापारियों की समस्याओं का पता नहीं चल रहा है, जो दूसरे राज्यों में आने-जाने के लिए ट्रेन का इस्तेमाल करते हैं। वे परेशान हो रहे हैं। जाखड़ ने यह भी कहा है कि मुख्यमंत्री भगवंत मान की जिम्मेदारी बनती है कि वह किसानों की समस्याओं का हल करें, ताकि ट्रैक क्लीयर हो सके।

भाजपा के उम्मीदवारों को भी कुछ किसान ग्रामीण हलकों में प्रचार करने से रोकने का अपराध कर रहे हैं। खासतौर पर सबसे ज्यादा परेशान फरीदकोट में भाजपा के उम्मीदवार और प्रसिद्ध गायक हंसराज हंस को कर रहे हैं। वह जहां भी प्रचार करने जाते हैं, कुछ किसान संगठन पहुंच जाते हैं। अपनी क्षमता के अनुसार वह उनके सवालों के जवाब भी देते हैं। दो बार तो उन्होंने खुद उनके पास जाकर उनके सवालों के जवाब दिए, इसके बावजूद भी कुछ अड़ियल किसान उन्हें प्रचार करने से रोक रहे हैं। उन्होंने तो यहां तक कह दिया है कि अब वह हंसराज हंस नहीं, बल्कि मिन्नत राज मिन्नत हो गए हैं। पुलिस-प्रशासन को इसका संज्ञान लेना चाहिए। कोई किसी को चुनाव प्रचार करने से कैसे रोक सकता है। हंसराज हंस का एक सवाल और भी वाजिब है कि अन्य दलों के भी उम्मीदवार चुनाव में खड़े हैं, लेकिन कुछ किसान केवल उनका ही विरोध क्यों कर रहे हैं? प्रदेश में रहीं अन्य दलों की सरकारें भी कृषि सुधार की दिशा में अपनी भूमिका नहीं निभा पाईं, पर किसान संगठन उनके उम्मीदवारों से सवाल क्यों नहीं कर रहे हैं?

हंसराज हंस की इन दलीलों का किसानों पर कोई असर नहीं हो रहा है। उनका कहना है कि वे अपनी मांगों को लेकर दिल्ली जाना चाहते थे, लेकिन उन्हें रास्ते में रोक दिया गया। ऐसा नहीं है कि उनकी मांगों को लेकर केंद्र सरकार ने कोई प्रयास नहीं किए। केंद्रीय खाद्य एवं आपूर्ति मंत्री पीयूष गोयल, कृषि मंत्री अर्जुन मुंडा आदि लगातार चंडीगढ़ आते रहे, लेकिन कोई समाधान नहीं निकला। उन बैठकों में मुख्यमंत्री भगवंत मान भी शामिल होते रहे, लेकिन वह भी किसानों को मनाने में कामयाब नहीं हुए। केंद्र सरकार ने किसानों को गेहूं और धान के अलावा कपास, मक्का, तिलहन और दलहन पर भी न्यूनतम समर्थन मूल्य देने का वादा किया, लेकिन किसानों का कहना है कि सभी 23 फसलों पर न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी दी जाए। किसान न्यूनतम समर्थन मूल्य की कानूनी गारंटी सहित कई मांगों को लेकर प्रदर्शन कर रहे हैं।

अब संयुक्त किसान मोर्चा ने एक कदम आगे बढ़कर घोषणा की है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी या केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह अगर पंजाब में रैली करेंगे तो संयुक्त किसान मोर्चा जिला एवं तहसील स्तर पर काले झंडे दिखाकर उनका विरोध करेगा। पंजाब के किसान संगठनों को ऐसे कदम उठाने से बाज आना चाहिए। अभी देश में चुनाव हो रहे हैं। ऐसे में उन्हें शांति बनाए रखना चाहिए। अच्छा होगा कि नई सरकार बनने तक इंतजार करें। वे अपनी मांगें उसके समक्ष रखें।

अड़ियल रवैया छोड़ें किसान संगठन। फाइल

****

अमर उजाला

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

नई दिल्ली ■ बुधवार, 1 मई 2024

जब तक आप बेहतर को नहीं जानते, तब तक अपना सर्वश्रेष्ठ देने का प्रयास करें। जब आप बेहतर को जानने लगें, तो बेहतर काम करें।
-माया एंजेलो

भले ही जनता दल (एस) ने अश्लील वीडियो मामले में प्रज्वल रेवन्ना को पार्टी से निलंबित कर दिया हो, लेकिन कथित तौर पर महिलाओं के साथ उनके जैसे विकृतिपूर्ण वीडियो सामने आए हैं, उन्हें देखते हुए जरूरी है कि मामले की तत्काल जांच हो और दोषी पाए जाने पर उन पर कड़ी कार्रवाई भी हो।

शर्मनाक

लोकसभा चुनावों के बीच पूर्व प्रधानमंत्री एचडी देवगौड़ा के पुत्र व पूर्व मंत्री एचडी रेवन्ना और पोते प्रज्वल रेवन्ना, जो हासन से मौजूदा सांसद और लोकसभा प्रत्याशी भी हैं, से जुड़े यौन उत्पीड़न एवं अश्लील वीडियो मामले में जनता दल (सेक्युलर) ने प्रज्वल रेवन्ना को पार्टी से निलंबित कर पार्टी के भीतर व बाहर एक संदेश देने की कोशिश जरूर की है, लेकिन इस मामले में जो विवरण सामने आ रहे हैं, वे बेहद शर्मनाक और चौंकाने वाले हैं। दरअसल, प्रज्वल व उनके पिता के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज कराने वाली घरेलू सहायिका का आरोप है कि पिता-पुत्र ने लगातार चार साल तक उसका यौन उत्पीड़न तो किया ही, प्रज्वल ने उसकी बेटी को भी फोन पर तब तक परेशान किया, जब तक कि उसने उन्हें ब्लॉक नहीं कर दिया। आरोप है कि यही स्थिति उनके घर में काम करने वाली दूसरी सहायिकाओं की भी थी। कर्नाटक पुलिस के अनुसार, चुनाव प्रचार के दौरान, मतदाताओं के बीच पेन ड्राइव वितरित की गईं, जिनमें प्रज्वल के करीब तीन हजार आपत्तिजनक वीडियो थे। एचडी रेवन्ना इसे राजनीति से प्रेरित बता रहे हैं, पर जिस तरह के वीडियो सामने आए हैं, जिनमें से अधिकांश कथित तौर पर प्रज्वल ने अपने मोबाइल फोन पर घर और दफ्तर में रिकॉर्ड किए थे, उन पर सवाल तो उठते ही हैं। जिस पार्टी का चुनाव चिह्न ही सिर पर धान रखकर ले जाती महिला का प्रतिनिधित्व करता हो, उसी पार्टी का युवा नेता कथित तौर पर ऐसी करतूतों में लिप्त हो, तो यह शर्मनाक ही है। मैकेनिकल इंजीनियरिंग की डिग्री पाने के बाद 2014 के चुनाव में अपने दादा और पूर्व प्रधानमंत्री देवगौड़ा की मदद के लिए ऑस्ट्रेलिया में मास्टर्स की पढ़ाई बीच में छोड़ कर्नाटक लौटने वाले और 2015 में ब्रिटेन की कॉमनवेल्थ पार्लियामेंट्री एसोसिएशन के दस उभरते हुए युवा राजनीतिज्ञों की सूची में शामिल प्रज्वल रेवन्ना जैसे युवा नेता का ऐसे आरोपों में घिरना निराश भी करता है। भाजपा नेता देवराज गौड़ा के पिछले साल दिसंबर के एक पत्र, जिसमें प्रज्वल रेवन्ना के अश्लील वीडियो से भरी एक पेन ड्राइव का जिक्र था, का हवाला देते हुए राज्य में सत्तारूढ़ कांग्रेस राजनीतिक लाभ लेने की कोशिश में है, जबकि नैतिकता का तकाजा तो यही है कि इस मामले में उसी वक्त अविलंब कार्रवाई की जानी चाहिए थी। राजनीतिक जीवन में ऐसे लोगों का होना खतरनाक है। कथित तौर पर महिलाओं के साथ प्रज्वल रेवन्ना के जैसे विकृतिपूर्ण वीडियो सामने आए हैं, उन्हें देखते हुए जरूरी है कि घटना की तत्काल जांच हो और दोषी पाए जाने पर उन पर कड़ी कार्रवाई भी हो।

चुनावी 'पावर प्ले' में बयानों की गुगली

भारत बेहतर का हकदार है। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के 96 करोड़ से अधिक मतदाता सिर्फ तर्क-कुतर्क के नहीं, बल्कि प्रतिस्पर्धी विचारों के परिदृश्य के भी हकदार हैं। क्षमता और अवसर की विषमताओं से निपटने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

इंडियन प्रीमियर लीग में नए प्रतिमान गढ़े जा रहे हैं। खिलाड़ियों ने पारंपरिक स्ट्राइक रेट के गणित की धज्जियां उड़ा दी हैं। इंडियन पॉलिटिकल लीग में भी मौजूदा टेम्प्लेट को खत्म किया जा रहा है। अगर क्रिकेट के मैदानों पर रिकॉर्ड तोड़े जा रहे हैं, तो 2024 के चुनाव की राजनीतिक बयानबाजी भी अभिव्यक्ति एवं दावों के मानदंडों एवं सीमाओं को मिटा रही है। लेकिन दोनों का प्रभाव बिल्कुल विपरीत है। मैच देखने वाले रोमांचित हो रहे हैं, जबकि राजनीतिक बयानबाजी सुनने वाले निराश हैं और यहां तक कि समर्थकों का समूह भी बेचैन है। खेल के मैदान की तरह, ऊंचे शॉट्स (बड़ी-बड़ी बातें), रहस्यमय और दिमाग को सुन्न कर देने वाले दावों की कमी नहीं है, जो गुगली और यॉर्कर से कम नहीं हैं। और ध्यान रखिए, लोकसभा चुनाव अभी 'पावर प्ले' चरण में है, सात में से केवल दो चरणों के मतदान संपन्न हुए हैं।

शंकर अय्यर
वरिष्ठ पत्रकार

परेशान करने वाले अनुत्तरित सवाल संदर्भों में उलझे हुए हैं। उम्मीद है कि ये सवाल राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों को अपने घोषित और अघोषित इरादे पर ईमानदार आत्मनिरीक्षण के लिए प्रेरित करेंगे। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में बहस की गुणवत्ता मायने रखती है।

अब तक घोषणा पत्र मूलतः चुनाव प्रचार के लिए 'आइटम सॉन्ग' होते थे, पर आश्चर्यजनक रूप से घोषणा पत्र जन अभियान रैलियों के 'थीम सॉन्ग' के रूप में उभरे हैं। कांग्रेस को शायद अपने राजनीतिक वादे में लोगों की इतनी दिलचस्पी की उम्मीद भी नहीं होगी, इसके न्याय पत्र को शायद भारी संख्या में डाउनलोड किया गया होगा।

मीडिया में चर्चा है कि क्या न्याय पत्र में पुनर्वितरण के लिए निजी संपत्ति को जब्त करने का स्पष्ट उल्लेख है या नहीं। मुश्किल यह है कि पहचान के उपकरणों के रूप में प्रयुक्त व्यंजना (मंगलसूत्र, घुसपैठिया और ज्यादा बच्चे पैदा करने वाले) को रेखांकित किया गया, जिसके चलते ध्रुवीकरण हुआ है। कांग्रेस इस बात पर बहस कर सकती है कि स्पष्ट रूप में क्या कहा गया है, लेकिन तेजी से बढ़ते चुनावी चक्र में राजनीति अंतर्निहित मान्यताओं की धारणाओं पर आधारित होती है। पिछले दो हफ्ते में नैरेटिव में आया बदलाव स्पष्ट है। अयोध्या में राम मंदिर के अभिषेक के बाद आम धारणा थी कि 2024 के चुनाव का नतीजा तय है। फरवरी में 'अबकी बार 400 पार' का नारा सामने आया और भाजपा ने अपने दम पर 350 का आंकड़ा पार करने का दावा किया। पिछले हफ्ते की घटनाओं ने धारणाओं को तो नहीं बदला है, पर 400 पार के आंकड़े पर समर्थकों के बीच भी सवाल उठने लगे हैं।

जिस बात पर चर्चा हो रही है, वह राजनीतिक तथ्यों के चरित्र पर कम और बयानबाजी के कारणों पर ज्यादा है। लोकप्रिय धारणा इसे पहले चरण में कम मतदान पर प्रतिक्रिया के रूप में परिभाषित करती है और यह अटकलों से भरा हुआ है। बहस का विषय यह है कि क्या यह जुबानी जंग मतदान प्रतिशत को बढ़ाने के लिए है या ऐसे संदेश भेजने का उद्देश्य कार्यकर्ताओं को मतदान के लिए प्रेरित करना था?

यह समझने में गलती नहीं करनी चाहिए कि भाजपा की अगुआई वाले राजग और विपक्षी गठबंधन की क्षमताओं में भारी असमानता है और यह क्षमता कांग्रेस के कारण और खराब हुई है। भाजपा का घोषणा पत्र आकांक्षाओं का दस्तावेज है-सब अमृत काल के विचारों में समाहित है। कांग्रेस का घोषणा पत्र महज वचन पत्र है। इसके कुछ वादों को यथोचित विस्तार दिया गया है, जबकि कुछ हिस्से पेचीदा हैं। इसमें बिना किसी स्पष्टीकरण के जातिगत और वित्तीय सर्वेक्षण की घोषणा ने दावों का पिटारा खोल दिया है, जिसका भाजपा ने लाभ उठाया। सैम पित्रोदा का वीडियो कांग्रेस की स्थिति को और कमजोर कर रहा है। हैरानी नहीं कि बहस विरासत-कर पर केंद्रित हो गई है-जिसे भाजपा ने जोर-शोर से उठाया और कांग्रेस विरासत-कर लागू करने से इन्कार कर रही है। असमानता एक जटिल विषय है। इतिहास हमें बताता है कि भारत में धन और संपत्ति पर कर लगाने की कोशिश की गई और फिर उन्हें खारिज कर दिया गया।

प्रणालीगत असमानताओं को दूर करने का कोई भी प्रयास नीतियों में अंतराल को पाटने के साथ शुरू होना चाहिए। मसलन, कृषि को अधूरे आर्थिक मॉडल के अभिशाप से मुक्त करना। निश्चित रूप से, जाति जनगणना दोषों को उजागर कर सकती है, लेकिन क्षमता और अवसर की विषमताओं से निपटने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है—स्वास्थ्य में निवेश, प्राथमिक शिक्षा में सुधार और कौशल के लिए स्टाइपेंड आधारित ढांचे का निर्माण।

बहस वास्तविकताओं पर केंद्रित होनी चाहिए। क्या धन को नियंत्रित और पुनर्वितरित किया जा सकता है और किया जाना चाहिए? या क्या अभाव को करों से एकत्रित राजस्व से वित्त पोषित किया जाना चाहिए? क्या अरबों डॉलर रखने वाले धनाढ्यों के अप्रत्याशित लाभ पर कर लगाने की गुंजाइश है? ये ऐसे प्रश्न हैं, जो अर्थव्यवस्था की बुनियादी बातों को प्रभावित करते हैं। और यह स्वीकार करना चाहिए कि सरकारें पुनर्वितरण में लगी हुई हैं-और यह भारत की बैलेंस शीट पर दिखाई देता है। केंद्र प्रायोजित योजनाओं पर भारत पांच लाख करोड़ रुपये से अधिक खर्च करता है। 81.3 करोड़ लोगों को मुफ्त राशन, 50 करोड़ लोगों को स्वास्थ्य कवरेज, आवास, किसानों और महिलाओं को प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण-सभी करों के रूप में मिलने वाले राजस्व से होता है।

भारत की गरीबी के बारे में सच्चाई एक आंकड़े में अंतर्निहित है—कृषि में लगे लगभग आधे कार्यबल को राष्ट्रीय आय के छठे हिस्से पर निर्भर रहना पड़ता है। इस कॉलम में पहले भी भारतीय अर्थव्यवस्था के राजनीतिक भूगोल को चित्रित किया गया था-बिहार के शिवहर और तेलंगाना के हैदराबाद में प्रति व्यक्ति आय में अंतर बहुत बड़ा है। क्षेत्रीय और भौगोलिक विचलन और नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता से बचा नहीं जा सकता है। निश्चित रूप से भारत को शैक्षिक, डिजिटल या आय जैसे कई अंतरों को पाटना चाहिए। ये मुद्दे एक मजबूत बहस की मांग करते हैं। दिक्कत यह है कि विपक्ष बिखरा हुआ है। लगता है कि प्रमुख विपक्षी दल, कांग्रेस के पास अपना नुकसान करने की प्रतिभा और भाजपा को फायदा पहुंचाने की अद्भुत क्षमता है।

भारत बेहतर का हकदार है। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के 96 करोड़ से अधिक मतदाता सिर्फ तर्क-कुतर्क के नहीं, बल्कि प्रतिस्पर्धी विचारों के परिदृश्य के भी हकदार हैं।

जीवन धारा

महात्मा गांधी

जिसने प्रार्थना के जादू का अनुभव किया है, वह लगातार कई दिन तक आहार के बिना तो रह सकता है, परंतु प्रार्थना के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता। कारण, प्रार्थना के बिना भीतरी शांति नहीं मिलती।

ईश्वर से भीतरी लौ लगाने के लिए करें प्रार्थना

प्रार्थना मनुष्य के जीवन का धर्म होनी चाहिए, क्योंकि कोई आदमी धर्म के बिना जी ही नहीं सकता। कुछ लोग हैं, जो अपनी बुद्धि के अहंकार में कह देते हैं कि उन्हें धर्म से कोई सरोकार नहीं। मगर यह तो ऐसा ही है, जैसे कोई मनुष्य कहे कि वह सांस तो लेता है, मगर उसकी नाक नहीं है। बुद्धि से कहिए या स्वभाव से अथवा अंधविश्वास से कहिए, मनुष्य दिव्य तत्व से अपना कुछ न कुछ नाता स्वीकार करता ही है। घोर नास्तिक या अनीश्वरवादी भी किसी नैतिक सिद्धांत की आवश्यकता को मानता है और उसके पालन में कुछ न कुछ भलाई और उसका पालन न करने में बुराई समझता है। ब्रेडलो की नास्तिकता मशहूर है; वह सदा अपने आंतरिक दृढ़ विश्वास को घोषित करने का आग्रह रखते थे। उन्हें इस प्रकार सच कहने के कारण अनेक कष्ट उठाने पड़े, परंतु इसमें उन्हें आनंद आता था और वह कहते थे कि सत्य स्वयं अपना पुरस्कार है। यह बात नहीं थी कि उन्हें सत्य के पालन से होने वाले आनंद का बिल्कुल भान नहीं था। परंतु यह आनंद पूरी तरह सांसारिक ही नहीं होता, यह ईश्वर के साथ अपने संबंध की अनुभूति से पैदा होता है। इसलिए मैंने कहा है कि जो इंसान धर्म को नहीं मानता, वह भी धर्म के बिना नहीं रह सकता।

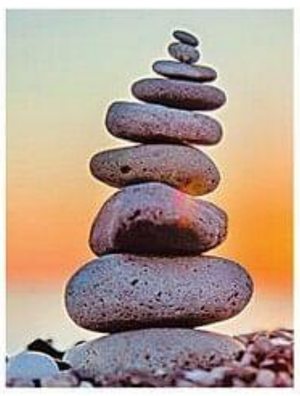

अब मैं दूसरी बात पर आता हूं। वह यह है कि प्रार्थना जैसे धर्म का सबसे मार्मिक अंग है, वैसे ही मानव-जीवन का भी। प्रार्थना या तो याचनारूप होती है या व्यापक अर्थ में वह ईश्वर से भीतरी लौ लगाना है। दोनों ही सूरत में अंतिम परिणाम एक ही होता है। जब वह याचना के रूप में हो, तब याचना आत्मा की सफाई और शुद्धि के लिए, उसके चारों ओर लिपटे हुए अज्ञान और अंधकार के आवरण हटाने के लिए होनी चाहिए। इसलिए जो अपने भीतर दिव्य ज्योति जगाने को तड़प रहा हो, उसे प्रार्थना का आसरा लेना होगा। परंतु प्रार्थना शब्दों या कानों का व्यायाम मात्र नहीं है, खाली मंत्र-जाप नहीं है। आप कितना ही रामनाम जपिए, अगर उससे आत्मा में हलचल नहीं मचती, तो वह व्यर्थ है। प्रार्थना में शब्दों के बिना हृदय होना, हृदय के बिना शब्द होने से बेहतर है। वह स्पष्ट रूप से आत्मा की तड़प के जवाब में होनी चाहिए। और जैसे कोई भूखा आदमी मनचाहे भोजन में मजा लेता है, ठीक वैसे ही भूखी आत्मा को हार्दिक प्रार्थना में आनंद आता है। और यह मैं अपने और अपने साथियों के थोड़े से अनुभव से कहता हूं कि जिसने प्रार्थना के जादू का अनुभव किया है, वह कई दिन तक आहार के बिना तो रह सकता है, परंतु प्रार्थना के बिना एक क्षण भी नहीं। कारण, प्रार्थना के बिना भीतरी शांति नहीं मिलती। अगर यह बात है, तो कोई कहेगा कि हमें अपने जीवन के हर क्षण में प्रार्थना करते रहना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं। परंतु हर क्षण ईश्वर से लौ लगाए रखना, तो असंभव ही होगा। इसलिए हम प्रार्थना के लिए कुछ घंटे नियत करके उस समय संसार का मोह छोड़ देने का गंभीर प्रयत्न करते हैं।

प्रार्थना की शक्ति...

सूत्र

मनुष्य के हृदय में अंधकार और प्रकाश की शक्तियों में सतत संग्राम होता रहता है। अतः जिसके पास प्रार्थना की ढाल का सहारा नहीं है, वह अंधकार की शक्तियों का शिकार हो जाएगा। प्रार्थना करने वाला आदमी अपने मन में शांति का अनुभव करेगा और संसार के साथ भी उसका संबंध शांति का होगा।

दूसरा पहलू

केरल 'जल बजट' अपनाने वाला देश का पहला और इकलौता राज्य है, जिसने पानी की बर्बादी रोकने की पहल की है।

जल संकट में प्रभावी जल बजट का प्रयोग

केरल 'जल बजट' अपनाने वाला देश का पहला और इकलौता राज्य है। इसे अपनाकर केरल ने जल की मांग और आपूर्ति सुधारने, भूजल स्तर को बढ़ाने, कृषि उत्पादन की सुनिश्चितता, पर्यावरण व समग्र जल सुरक्षा और पानी की बर्बादी रोकने की दिशा में मिसाल कायम की है। दरअसल दक्षिण-पश्चिम मानसून से पहली वर्षा केरल के तट पर ही होती है, बावजूद इसके, गर्मी के दिनों में राज्य के कुछ इलाके पानी की कमी का सामना करते हैं। इन्हीं चुनौतियों से निपटने के लिए केरल ने जल बजट बनाने का फैसला किया है।

सुधीर कुमार

जल बजट जल संसाधन के प्रबंधन पर केंद्रित एक रणनीति है। यह जल के उपभोग की सीमा निर्धारित करती है, जिससे भूजल स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

नीति आयोग के अनुसार, 2030 तक देश की 40 प्रतिशत आबादी के पास पीने के लिए पानी का अभाव रहेगा। ऐसे में जल बजट की महत्ता समझी जा सकती है।

जल बजट जल संसाधन की मात्रा तय करने और उनके प्रबंधन पर केंद्रित एक रणनीति है। यह जल की उपलब्धता और उपयोग का सालाना ब्यौरा देती है। जल बजट किसी वर्ष विशेष में प्राप्त पानी को वितरित व प्रबंधित करने का समाधान पेश करती है। यह जल के उपभोग की सीमा निर्धारित करती है, जिससे भूजल स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है और इसके भंडारण को स्थायी रूप से सूखने से बचाया जा सकता है। यह भूजल की स्थिति की भी जानकारी देता है। जल बजट के तहत उपलब्ध जल को खर्च करने की योजना बनाई जाती है और उसी के अनुसार उसका कुशल उपयोग किया जाता है। अगर हमें पहले से पता हो कि हमारे पास कितना पानी है और वह कितने दिनों में समाप्त हो जाएगा, तो हम उसका बुद्धिमत्तापूर्ण इस्तेमाल कर सकते हैं। इससे आसन्न जल संकट को टाला जा सकता है।

सूखे और मानसून की अनिश्चितता तथा जल बजट जैसी व्यवस्था न होने के कारण ही देश के कई शहर 'डे-जीरो' की स्थिति का सामना कर रहे हैं। बंगलूरू और चेन्नई जैसे शहर अपने निवासियों की प्यास के साथ-साथ अन्य जरूरतों के लिए पानी उपलब्ध कराने में असमर्थता जता चुके हैं। नीति आयोग की रिपोर्ट बताती है कि 2030 तक देश की 40 प्रतिशत आबादी के पास पीने के लिए पानी का अभाव रहेगा। सुप्रीम कोर्ट ने कहा भी था कि अनुच्छेद 21 के तहत 'जीवन के अधिकार में प्रदूषण मुक्त पानी और हवा का अधिकार शामिल है।' हालांकि यह तभी संभव है, जब हरेक स्तर पर जल संरक्षण के सार्थक प्रयास हों। जल संकट के व्यापक होने का प्रमुख कारण भूमिगत जल का अंधाधुंध दोहन है। जल बजट एक महत्वपूर्ण साधन है, जिसके सफल क्रियान्वयन से पानी की उपलब्धता बेहतर हो सकती है। जल संरक्षण के विभिन्न तरीकों को धरातल पर उतारने की दरकार है।

आंकड़े

केला उत्पादन में अव्वल

हमारा देश शीर्ष केला उत्पादक देशों में अव्वल है, जिसकी वैश्विक उत्पादन में हिस्सेदारी एक चौथाई से ज्यादा है।

स्रोत : FAO

मन की शांति सबसे ज्यादा अनमोल है। वह मांगने से कभी नहीं मिलती। जब कोई निःस्वार्थ भाव से ईश्वर की शरण में आता है, तो उसे शांति मिलती है।

मन की शांति

अंतर्यात्रा

संकलित

एक आदमी बड़ी मुश्किल से अपना गुजारा करता था। वह रोज मंदिर जाकर भगवान से प्रार्थना करता कि मुझे ढेर सारा धन दे दो। एक दिन भगवान ने उसे दर्शन देकर पूछा, क्या तुम सिर्फ धन के लिए मंदिर आते हो? उस आदमी ने ईमानदारी से जवाब दिया, हां, गरीबी की वजह से न मैं अपनी इच्छा पूरी कर पाता हूं, और न ही घर वालों की। भगवान ने उससे कहा, तुम चिंता मत करो। जो सच्चे मन से किसी वस्तु की कामना करता है, उसे वह वस्तु अवश्य मिलती है। फिर भगवान अंतर्धान हो गए।

कुछ ही दिनों बाद उसकी परिस्थिति बदलने लगी। वह काफी पैसे वाला बन गया। व्यस्त होने के कारण अब उसका मंदिर जाना भी छूट गया!

वर्षों बाद वह फिर एक दिन मंदिर गया, तो भगवान फिर उसके सामने प्रकट होकर बोले, अब क्या कमी है, जिसे पूरा करने आए हो? वह आदमी बोला, भगवान आपने मुझे सब कुछ दिया। लेकिन सब कुछ होते हुए भी मन को शांति नहीं मिली! भगवान ने उससे कहा, मन की शांति तो तुमने कभी मांगी ही नहीं! मन की शांति सबसे ज्यादा अनमोल है। वह मांगने से कभी मिलती भी नहीं। जब कोई निःस्वार्थ भाव से मेरी शरण में आता है, तो उसे बिना मांगे ही शांति मिल जाती है।

(अमर उजाला आर्काइव से)

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 29 नवंबर, 1989

विधानसभा भंग करने की सिफारिश

उ.प्र. विधान सभा भंग करने की सिफारिश

लखनऊ, 28 नवम्बर, (भाषा)। उत्तर प्रदेश मंत्रिमंडल ने आज रात राज्यपाल मोहम्मद उस्मान आरिफ से विधानसभा को भंग करने की सिफारिश करने का फैसला किया।

मंत्रिमंडल की बैठक में विधानसभा भंग करने तथा मंत्रिमंडल का इस्तीफा सौंप देने का निर्णय किया गया। मुख्यमंत्री तिवारी की अध्यक्षता में हुई बैठक में प्रायः सभी मंत्री मौजूद थे। ज्ञातव्य है कि तिवारी मंत्रिमंडल के अधिकांश सदस्य चुनाव हार गये हैं।

मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी ने बाद में संवाददाताओं से बातचीत करते हुए कहा कि विधानसभा भंग करने की मंत्रिमंडल

उत्तर प्रदेश मंत्रिमंडल ने आज राज्यपाल मोहम्मद उस्मान आरिफ से विधानसभा को भंग करने की सिफारिश करने का फैसला किया। मंत्रिमंडल के अधिकांश सदस्यों के चुनाव हारने के बाद मंत्रिमंडल की बैठक में यह फैसला लिया गया है।

बीच सड़क दिल न दे जाए धोखा

कोरोना के बाद हार्ट अटैक के मामले बढ़े हैं, ऐसे में वाहन चालकों की नियमित स्वास्थ्य जांच करना जरूरी है, ताकि हादसों से बचा जा सके।

ऋतुपर्ण दवे

स्वास्थ्य

सड़क पार करना और किनारे बने फुटपाथ पर भी चलना क्या अब सुरक्षित नहीं रह गया है? ऐसे में जैब्रा क्रॉसिंग को कैसे सुरक्षित माना जा सकता है? ये सवाल इन दिनों लोगों के मन में उठ रहे हैं, क्योंकि बीते कुछ वक्त में ऐसे कुछ हादसे हुए हैं, जब बीच सड़क पर वाहन चालक अचानक नियंत्रण खो बैठा। हालांकि ऐसा उसने किसी साजिश के तहत या जान-बूझकर नहीं किया। जब वाहन इधर-उधर टकराते हुए रुका, तो पता चला कि ड्राइवर की या तो सांसें थम चुकी हैं या वह बेहोश हो चुका है।

ऐसी घटनाएं इन दिनों सुर्खियों में हैं। राजस्थान के नागौर में एक शोभायात्रा के दौरान सड़क से गुजर रही बोलेरो के ड्राइवर को हार्ट अटैक होने से वाहन बेकाबू हो गया और कई लोग कुचले गए। इलाज के दौरान ड्राइवर की मौत हो गई। 18 दिसंबर, 2023 को प्रतापगढ़ में ड्राइवर को अचानक हार्ट अटैक आया, जिससे सड़क पर चलती बालू लदी ट्रैक्टर-ट्रॉली पलट

गई। ड्राइवर समेत दो लोगों की वहीं मौत हो गई। 4 नवंबर, 2023 को दिल्ली के रोहिणी में डीटीसी बस हादसा हुआ। सीसीटीवी से पता चला कि ड्राइवर को हार्ट अटैक आया था और उसने गिरते हुए भी बस को रोकने की नाकाम कोशिशें कीं। लेकिन रफ्तार में चल रही बस फुटपाथ पर बाइकों को रौंदते हुए बढ़ती रही। 14 दिसंबर, 2023 को देवरिया में एक गांव से बोलेरो में बरातियों को लेकर ड्राइवर मनोज यादव बस्ती की ओर निकला। अचानक उसे हार्ट अटैक आया, तो उसने गाड़ी रोक दी। लेकिन उसे जब अस्पताल पहुंचाया गया, तो डॉक्टरों ने मृत करार दिया। राजस्थान के जैसलमेर में 4 नवंबर, 2023 को बस ड्राइवर की हार्ट अटैक से तत्काल मौत हो गई। गनीमत रही कि कंडक्टर ने फुर्ती दिखाकर बस रोक ली। मध्य प्रदेश के जबलपुर में 3 दिसंबर, 2022 को शहर के बीचों-बीच सिटी बस चला रहे ड्राइवर हरदेव सिंह को हार्ट अटैक आया और वहीं मौत हो गई। उस हादसे में छह राहगीर घायल हो गए।

विशेषज्ञ हाल के दिनों में बढ़ते हार्ट अटैक में कोरोना की भूमिका बता रहे हैं। एक प्रख्यात अमेरिकी संस्थान की रिपोर्ट भी इसकी पुष्टि करती है कि जिनमें कोरोना के हल्के लक्षण मिले, उनमें भी मौत का जोखिम 20 प्रतिशत बढ़ा। कोरोना के बाद दुनिया भर में हार्ट अटैक के मामले तेजी से बढ़े हैं। आज कहीं भी और किसी भी उम्र के लोगों को हार्ट अटैक हो रहा है। हार्ट अटैक से मौतें पहले भी होती थीं, लेकिन इस तरह नहीं। पहले अधिकतर बड़े-बूढ़े या बीमार इसके शिकार होते थे।

सड़क पर अचानक वाहन चलाते वक्त हार्ट अटैक से हुई मौतें चिंताजनक हैं। इस पर सरकार को चेतना होगा। ऐसी स्थिति में वाहन को कैसे नियंत्रित किया जाए और ड्राइवर के अलावा अन्य लोगों के साथ होने वाली दुर्घटना को कैसे रोका जाए, यह एक बड़ी चुनौती है। वाहन पर काबू करने की कोई पहल भी समझ में नहीं आती। लगता है, परिवहन विभाग इस नई चुनौती से बेसुध है। लाइसेंस जारी करने से पहले ड्राइवर की आंखों की जांच का प्रावधान है, लेकिन शारीरिक स्थिति की नियमित जांच नहीं होती।

आज चिकित्सा विज्ञान काफी तरक्की कर चुका है। सेहत की छोटी-छोटी जांच से बड़े-बड़े खतरे भांपना बहुत आसान है। यदि ड्राइवर को हार्ट अटैक का शिकार होने से पहले ही इसका संकेत मिल जाए, तो वह अपनी और दूसरों की जान जोखिम में क्यों डालेगा? इसलिए ड्राइवरों की शारीरिक स्थिति की नियमित जांच होनी चाहिए। वास्तव में होना तो यह चाहिए कि टोल नाकों की तर्ज पर स्वास्थ्य नाके भी बनें, जहां अत्याधुनिक, सक्षम व उन्नत मशीनें और विशेषज्ञ तैनात रहें, जो ड्राइवरों की जांच कर ताजा रिपोर्ट ड्राइवर को देने के साथ उसे लाइसेंस की चिप में ट्रांसफर करे। हर ड्राइवर का हेल्थ डाटा कहीं भी, कभी भी एक्सेस किया जा सके और सूचना क्षेत्र सहित रूट के स्वास्थ्य विभाग को भेजी जाए, ताकि समय-समय पर जांच-परख कर सलाह, उपाय व दवाएं देकर लाइसेंस में उसकी जानकारी अपडेट की जा सके। इससे एक तो ड्राइवर की सेहत पर सतत चौकसी होगी और दूसरे, वाहन चलाते वक्त हार्ट अटैक का जोखिम भी कम होगा।

काश, 'दुर्घटना से देर भली' का नारा अलापने वाले सरकारी महकमे, समाजसेवी संगठन, नुमाइंदे और सरकारें उस गरीब ड्राइवर की सेहत को लेकर भी फिक्रमंद होतीं, जो हर नाके पर टैक्स अदा कर सरकारी खजाने को भरता है, तो कितना अच्छा होता!

edit@amarujala.com

हिन्दुस्तान
1936
सत्य · सार्थक · सदैव

दवाओं पर सवाल

भ्रामक विज्ञापन मामले में सर्वोच्च न्यायालय का रुख कदापि नरम पड़ता नहीं दिख रहा है और उसके कड़े रुख का जमीनी असर दिखाई पड़ने लगा है। उत्तराखंड सरकार ने पंतजलि आयुर्वेद की 14 दवाओं के लाइसेंस रद्द कर दिए हैं। बेशक, सर्वोच्च न्यायालय की तारीफ की जा सकती है कि वह पूरे सोच-विचार के बाद ही सजा देने की ओर बढ़ रहा है। लोगों को लग सकता है कि सजा सुनाने में देरी हो रही है, लेकिन वास्तव में न्यायालय सभी पक्षों को सुनवाई का पूरा मौका देना चाहता है और यही न्यायोचित है। न्यायालय कथित औषधि के भ्रामक विज्ञापन के मामले में समाज के सामने व्यापकता में आदर्श रखना चाहता है। मंगलवार को इंडियन मेडिकल एसोसिएशन (आईएमए) को भी अदालत ने फिर एक बार आड़े हाथों लिया। पिछली सुनवाई के समय शीर्ष अदालत ने कहा था कि एलोपैथिक डॉक्टर गैरजरूरी और महंगी दवाइयां लिखते हैं। यह बात आईएमए अध्यक्ष आर वी अशोकन को अच्छी नहीं लगी, तो उन्होंने अदालती टिप्पणी को 'दुर्भाग्यपूर्ण' करार दिया था। ध्यान रहे, आईएमए ही पंतजलि आयुर्वेद के खिलाफ अदालत गया है, पर आईएमए भी बेदाग नहीं है।

गौर करने की बात है कि शीर्ष अदालत ने आईएमए के वकील से कह दिया है, ज्यादा गंभीर परिणामों के लिए तैयार रहें। मतलब, भ्रामक विज्ञापन प्रकरण में न केवल आयुर्वेद, बल्कि एलोपैथी की दुनिया को भी सबक लेने की जरूरत है।

सर्वोच्च न्यायालय ने भ्रामक विज्ञापन मामले का यथोचित विस्तार किया है। उन सभी उत्पादों की जांच होनी चाहिए, जो भ्रामक विज्ञापन जारी करते रहे हैं, धोखा देते रहे हैं।

एलोपैथी को सफलतम व्यावहारिक उपचार विधि माना जाता है, पर यह नहीं मानना चाहिए कि वह सोलह आना सही है। आईएमए अध्यक्ष ने अहंकार और दुस्साहस का प्रदर्शन करते हुए यहां तक कह दिया था कि न्यायालय अस्पष्ट और अप्रासंगिक टिप्पणी कर रहा है और देश के चिकित्सा पेशे के खिलाफ व्यापक रुख अपनाना सर्वोच्च न्यायालय को शोभा नहीं देता है। जाहिर है, उनकी यह टिप्पणी बड़बोलापन भी है। हमने कोविड महामारी के समय ही देखा है कि किस तरह से चिकित्सा जगत में अफरातफरी का जानलेवा माहौल था। हर सांस का सौदा किया जा रहा था, मगर किसी अस्पताल या किसी चिकित्सक पर शायद ही आंच आई। गंभीर मरीजों पर नानाविध अपुष्ट प्रयोग किए गए और न जाने कितने मरीजों को अपनी मौत मरने के लिए छोड़ दिया गया। चिकित्सा क्षेत्र की कमियों का खमियाजा स्वयं चिकित्साकर्मियों ने भी बड़ी संख्या में भुगता था। एलोपैथी स्वयं को संत-सज्जन मानकर दूसरी चिकित्सा विधाओं को निशाना न बनाए, तो बेहतर है।

सर्वोच्च न्यायालय ने भ्रामक विज्ञापन मामले का यथोचित विस्तार किया है। उन सभी उत्पादों की जांच होनी चाहिए, जो भ्रामक विज्ञापन जारी करते रहे हैं और जनता को धोखा देते रहे हैं। इसी से जुड़ा एक मामला कोविड वैक्सीन का है। ब्रिटिश दवा कंपनी एस्ट्राजेनेका ने स्वीकार किया है कि उसकी कोविड वैक्सीन दुष्प्रभाव पैदा कर सकती है। वैक्सीन निर्माता ने अदालत में कहा है कि कोविशील्ड ऐसी स्थिति पैदा कर सकता है, जिससे रक्त के थक्के जम सकते हैं और प्लेटलेट काउंट कम हो सकता है। ध्यान रहे, एस्ट्राजेनेका को ब्रिटेन में मुकदमे का सामना करना पड़ रहा है कि उसके टीके के चलते कई लोगों की जान गई है। भारत में किसी दवा कंपनी से मुआवजे के लिए कोई आगे नहीं आया है, पर ब्रिटेन के हाईकोर्ट में 51 मामलों में पीड़ित 10 करोड़ पाउंड तक के हर्जाने की मांग कर रहे हैं। कोरोनील का दावा निंदनीय है, पर कोविशील्ड का बचाव आईएमए भला कैसे करेगा?

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले
01 मई, 1949

विराम संधि प्रस्ताव

काश्मीर कमीशन ने भारत और पाकिस्तान की सरकारों के सामने काश्मीर के बारे में विराम संधि के प्रस्ताव प्रस्तुत किये हैं। वह पिछले काफी समय से दोनों सरकारों के प्रतिनिधियों से चर्चा चला रहा था। उसने पिछली १५ अप्रैल को प्रस्तावों का एक मसविदा दोनों सरकारों के सामने रखा था, जिसे भारत सरकार ने स्वीकार नहीं किया। कुछ और चर्चा के बाद अब कमीशन ने विराम संधि के अपने आखिरी प्रस्ताव भारत और पाकिस्तान के सामने उनकी स्वीकृति के लिए पेश किये हैं। कमीशन इस निर्णय पर पहुंचा है कि अब दोनों सरकारों के साथ और चर्चा जारी रखने से कोई लाभ नहीं होगा। उसने दोनों सरकारों से एक सप्ताह के भीतर उत्तर मांगा है कि उन्हें विराम संधि के अंतिम प्रस्ताव स्वीकार हैं अथवा नहीं। काश्मीर कमीशन का यह रवैया कुछ अजीब मालूम देता है। काश्मीर का मामला असाधारण है और अपने प्रधानमंत्रियों की गैर मौजूदगी में दोनों सरकारों के लिए एक सप्ताह की अवधि में अपने उत्तर भेज सकना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य होगा। इससे भी अधिक महत्व की बात यह है कि जो प्रस्ताव खुद कमीशन के पुराने आश्वासनों और स्पष्टीकरणों से मेल नहीं खाते, उनको भारत सरकार कैसे स्वीकार कर सकती है।

काश्मीर विराम संधि के जो प्रस्ताव पेश किये गये हैं, उनको अभी गोपनीय रखा गया है। किन्तु उनके बारे में समाचारपत्रों में कुछ अनुमान प्रकाशित हुए है। यदि ये अनुमान सही हैं तो भारत के लिए इन प्रस्तावों को स्वीकार कर सकना कठिन प्रतीत होता है। भारत की आपत्ति विशेष रूप से दो बातों को लेकर है। एक तो विराम संधि के अनुसार दोनों पक्षों की सीमाओं की एक रेखा निश्चित होगी। कमीशन ने जो रेखा खींची है, उस पर भारत को आपत्ति है। कमीशन १ जनवरी, १९४९ को मोर्चे की जो वास्तविक स्थिति थी, उसी के आधार पर रेखा खींचना चाहता है। इस बारे में भारत का यह कथन बताया जाता है कि उत्तरी प्रदेश जिस पर पाकिस्तानी फौजों ने अधिकार कर लिया था, भारत के अधिकार में सौंप दिया जाना चाहिए। जो समझौता हुआ है, उसके अनुसार पाकिस्तान की नियमित अथवा अनियमित फौजों के लिए इस प्रदेश से हटना अनिवार्य है। अगर पाकिस्तानी फौज हट जाती है, तो स्वभावतः यह प्रदेश काश्मीर सरकार के संरक्षण में लौट जाता है।

शिशु आहार से मसालों तक शिकायत

हमारी खाद्य नियामक एजेंसियों को दबावों का सामना करने में सक्षम बनाने की जरूरत है। खाद्य गुणवत्ता जांचने वालों को अधिक साधन संपन्न, सतर्क और अभेद्य होना पड़ेगा।

के श्रीनाथ रेड्डी | प्रोफेसर, जन स्वास्थ्य, पीएचएफआई

अमेरिकी लेखक और पर्यावरणविद वेंडेल बेरी की एक तल्ख टिप्पणी आज बड़ी मौजूं है, 'लोगों को ऐसे खाद्य उद्योग द्वारा भोजन दिया जाता है, जो सेहत पर कोई ध्यान नहीं देता है ...और उनका इलाज ऐसे स्वास्थ्य उद्योग द्वारा किया जाता है, जो भोजन पर कोई ध्यान नहीं देता है।' साफ शब्दों में कहें, तो खाद्य उद्योग लोगों की सेहत के प्रति और स्वास्थ्य उद्योग लोगों के पोषण के प्रति लापरवाह है। जो लोग जन स्वास्थ्य के महत्व को समझते हैं, वे पोषण का महत्व भी अच्छी तरह जानते हैं। ऐसे विशेषज्ञ सेहत पर मंडराते खतरों और खाद्य उद्योग की भूमिका को लेकर सतर्क हैं।

आजकल जैसे उत्पाद बाजार से हमारे निवाले तक पहुंच रहे हैं, उनको लेकर बड़ी चिंता जताई जा रही है। एक हालिया रिपोर्ट पर नाराजगी है कि नेस्ले कंपनी भारत और कई अन्य विकासशील देशों में ऐसे शिशु आहार बेच रही है, जिसमें यूरोप में बेचे जा रहे शिशु आहार की तुलना में शर्करा की मात्रा ज्यादा है। जब यह रिपोर्ट सामने आई, तब हांगकांग व सिंगापुर की नियामक एजेंसियों ने दो भारतीय कंपनियों के कुछ मसालों पर रोक लगा दी, इससे भी चिंता की लहर दौड़ गई।

नेस्ले के शिशु आहार (सेरेलैक) पर रिपोर्ट एक स्विस गैर-सरकारी संगठन पब्लिक आई द्वारा जारी की गई है, जिसने इंटरनेशनल बेबी फूड एक्शन नेटवर्क के साथ मिलकर यह शोध किया है। दरअसल, नेस्ले कंपनी मातृ-दूध का विकल्प पेश करने का दावा करती है। तमाम स्वास्थ्य अधिकारी जिंदगी के पहले छह महीनों तक केवल मां का दूध पिलाने की सलाह देते हैं, क्योंकि इससे आदर्श पोषक संरचना, प्रतिरक्षा बढ़ाने वाले गुण और बच्चे की आंत में एक स्वस्थ माइक्रोबायोम के विकास में मदद मिलती है। जो कंपनियां मातृ-दूध के विकल्प को बढ़ावा देकर व्यावसायिक अभियान चलाती हैं, वे दरअसल मां और शिशु के स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी सोच को कमजोर करती हैं। कंपनियों ने प्रचार कर रखा है कि

मां के दूध के बिना भी शिशु पोषण संभव है।

आखिर, यह शिशु आहार संबंधी विवाद क्यों है? क्या खाद्य उद्योग खाद्य पदार्थों में शर्करा की मात्रा बढ़ाते हुए स्वास्थ्य संबंधी खतरे की ओर से अपनी आंखें बंद कर ले रहा है? यदि हां, तो वह पश्चिमी यूरोप में ऐसा न करने को लेकर क्यों सावधान है? वह भारत सहित अनेक विकासशील देशों में ऐसा करने के लिए क्यों आजाद महसूस करता है? क्या ऐसा इसलिए है, क्योंकि राष्ट्रीय नियामक एजेंसियों की क्षमता में अंतर है? यूरोप की खाद्य नियामक एजेंसियां ज्यादा सतर्क हैं। वे खाद्य पदार्थों की कड़ाई से निगरानी करती हैं और कानूनों को सही ढंग से लागू करती हैं। यूरोपीय नियामक खाद्य सामग्रियों की स्वतंत्र जांच में सक्षम हैं और कार्रवाई करने के लिए भी ज्यादा स्वतंत्र हैं।

ध्यान रहे, शिशु आहार में उच्च शर्करा मोटापे की वजह बन सकती है। उच्च शर्करा की शिकायत आगे चलकर मधुमेह में बदल सकती है। चूंकि उच्च शर्करा का सेवन एक लत में बदल जाता है, तो बच्चा अधिक आहार की मांग करता है, जिससे शरीर में वसा की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे कमजोर मांसपेशियों का विकास होता है। इससे एक चुस्त, सेहतमंद और आर्थिक रूप से उत्पादक पीढ़ी की उम्मीद धूल में मिल जाती है। यह वही पीढ़ी है, जो हमारे भविष्य की प्रगति की ध्वजवाहक बन सकती है।

यहां मसाला से जुड़ी कहानी अलग है। कथित तौर पर हांगकांग और सिंगापुर में नियामक एजेंसियों ने भारतीय मसालों में एथिलीन ऑक्साइड नाम का रासायनिक कैंसर कारक तत्व पाया है। इन दोनों देशों में प्रतिबंध के बाद, मीडिया ने बताया है कि सितंबर 2020 और अप्रैल 2024 के बीच यूरोपीय खाद्य सुरक्षा प्राधिकरण (ईएफएसए) ने 527 भारतीय खाद्य उत्पादों में इस रसायन का पता लगाया था। इसका उपयोग मसालों को सुगंधित बनाने के लिए भी किया जाता है। एथिलीन ऑक्साइड के संपर्क में आने से लिंफोमा और ल्यूकेमिया जैसे कैंसर हो सकते हैं। वैसे, पैकेटबंद मसालों को लेकर जो शिकायत आ रही है, उसके पीछे निर्माण की गलत विधि जिम्मेदार है। मसाला प्रसंस्करण का काम जहां होता है, वहां औद्योगिक रासायनों की माजूदगी एक वजह हो सकती है। दूसरी ओर, शिशु आहार की अगर बात करें, तो इसमें जान-बूझकर ज्यादा शर्करा तत्व मिलाए जा रहे हैं।

भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण कथित तौर पर सेरेलैक के भारतीय और अंतरराष्ट्रीय संस्करणों पर किए गए परीक्षणों की रिपोर्ट जुटाने की कोशिश कर रहा है। यह उन भारतीय मसाला ब्रांडों के देशव्यापी नमूने भी एकत्र कर रहा है, जिन्हें कुछ विदेशी नियामकों ने लाल झंडी दिखाई है। बेशक, मसालों की जांच सक्षम भारतीय प्रयोगशालाओं में की जाएगी, पर यह देखना चाहिए कि भारत में बने खाद्य उत्पादों की जांच के लिए पहले क्या-क्या उपाय किए गए हैं? क्या हमारी नियामक एजेंसियों के पास परीक्षण की तमाम जरूरी व्यवस्था है? हमें विदेशी संगठनों के खुलासे पर ही क्यों निर्भर रहना चाहिए या विदेशी नियामकों द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों से सतर्क क्यों रहना चाहिए? जब हम भारत में कुछ बनाते हैं, तो क्या उसकी सही जांच यहीं नहीं करनी चाहिए? हमारी नियामक एजेंसियों को उद्योग के प्रभाव या राजनीतिक दबावों का सामना करने में सक्षम बनाने की जरूरत है। खाद्य गुणवत्ता जांचने वालों को अधिक साधन संपन्न, सतर्क और अभेद्य होने की जरूरत है।

हमें अपनी नियामक एजेंसियों की कमान खाद्य उद्योग के ही पसंदीदा उदार या लचीले व्यक्तियों के हाथों में नहीं सौंपनी चाहिए। एजेंसी का मार्गदर्शन करने वाली तकनीकी सलाहकार समितियों में लचीले लोगों को शामिल करके एजेंसी पर कब्जा देने से बचना चाहिए। हालांकि, ऐसी नियुक्तियां अक्सर राजनीतिक फैसले पर आधारित होती हैं, पर नागरिक समाज को सुनिश्चित करना चाहिए कि नियामक एजेंसियां जन स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध रहें।

वैसे, ये चिंताएं केवल भारत के हिस्से नहीं हैं। पिछले दशक में कुछ पश्चिमी देशों ने उदारवादी राजनीतिक विचारधारा और उद्योग जगत के ज्यादा प्रभाव के चलते अपनी नियामक एजेंसियों को खत्म होते देखा है। ऐसे में, विकासशील देशों को नियामक दक्षता बनाए रखते हुए ज्यादा सतर्क रहना चाहिए। सेलिब्रिटी शेफ और लेखिका जूलिया चाइल्ड की चेतावनी पर गौर कीजिए, हमने यह सीखा है कि बड़ी कंपनियां कितनी ताकतवर, दखलंदाज, प्रभावशाली व आक्रामक हैं, और हमें सतत सतर्क रहना चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

हर साल जलने वाले जंगलों को भला कैसे बचाया जाए

एस पी सती | प्रोफेसर, वानिकी महाविद्यालय, रानीचौरी

शीतलता और हरियाली के प्रतीक माने जाने वाले जंगल इन दिनों धधक रहे हैं। उत्तराखंड के जंगलों में लगी आग अब इतनी विकराल हो चुकी है कि उन पर काबू पाने के लिए सेना को उतारना पड़ा है। ऐसा नहीं है कि दावानल की घटनाएं पहले नहीं होती थीं। सदियों से पहाड़ इसके गवाह रहे हैं। उत्तराखंड का इतिहास तो यह भी है कि 1920-21 में जब जंगलों पर लोगों के हक-हुकूक खत्म कर दिए गए, तब खुद लोगों ने ही आंदोलन के तहत वनों में आग लगा दिए थे। मगर अब तो हर साल दावाग्नि की समस्या विकराल रूप में सामने आने लगी है। इसकी कुछ खास वजहें हैं।

पहली वजह, जलवायु परिवर्तन के कारण 'ड्राई पीरियड' यानी सूखे की अवधि बढ़ गई है। तापमान बढ़ रहा है, जिसके कारण नमी कम हो रही है। नतीजतन, जंगलों में सूखी पत्तियां या टहनियां आसानी से दहक उठती हैं। वन विभाग के आंकड़े बता रहे हैं कि इस साल 1 जनवरी से लेकर 14 फरवरी के बीच जंगलों में आग लगने की 100 से अधिक बड़ी घटनाएं हुई हैं, जिसकी एक बड़ी वजह ड्राई पीरियड और तापमान-वृद्धि है। पहले यह अवधि छोटी होती थी, लेकिन अब जनवरी-फरवरी से लेकर मई-जून तक हम इसका एहसास करते हैं। दूसरी वजह है, सन् 1980 में वन (संरक्षण) कानून में किया गया वह प्रावधान, जिसके तहत पहाड़ों पर 1,000 मीटर ऊंचाई से ऊपर हरे पेड़ों की व्यावसायिक रूप से कटाई प्रतिबंधित कर दी गई। इसका नुकसान यह हुआ कि चीड़ के पेड़ों की संख्या असीमित बढ़ गई। चीड़ दरअसल ऐसा पेड़ है, जो आग बढ़ाने में सहायक माना जाता है। मार्च-अप्रैल से चीड़ की पत्तियां सूखकर नीचे गिरने लगती हैं और तापमान में वृद्धि होने पर आग के फैलाव का एक बड़ा कारण बनती हैं। बेशक, हरे पेड़ों की कटाई बंद होनी चाहिए, लेकिन ऐसा कोई प्रावधान तय करते समय हमें यह भी सोचना चाहिए कि किन पेड़ों की कटाई बंद होनी चाहिए और किनकी नहीं। ऐसा इसलिए, क्योंकि हर पेड़ की प्रकृति अलग होती है। चीड़ को अन्य पेड़ों के समान देखना एक गलत नजरिया साबित हुआ है।

वन (संरक्षण) कानून में सुधार करते हुए 1,000 मीटर से ऊंचाई पर चीड़ के पेड़ों की कटाई संबंधी प्रतिबंध तत्काल खत्म किए जाने चाहिए।

तीसरी वजह है, जंगलों से लोगों का रिश्ता खत्म हो जाना। पहले लोगों का अपने आसपास के जंगलों से करीबी रिश्ता होता था। वे वनोपज से अपना गुजारा करते थे, इसके बदले में जंगलों का प्रबंधन किया करते थे। मगर सरकार ने जैसे ही जंगल अपने हाथों में लिया, लोगों ने खुद को इससे अलग कर लिया। इसके कारण वन बढ़ते हुए गांवों तक पहुंच गए, जो दावानल की चौथी वजह है। पहले जंगल को रोकने के तमाम उपाय अपनाए जाते थे, लेकिन अब अव्वल तो पहाड़ी गांवों में लोग रहते नहीं, और जो रहते हैं, उनके घरों में एलपीजी गैस आदि की सुविधा बढ़ने से जंगलों पर उनकी निर्भरता खत्म हो गई है। नतीजतन, वे वनों को नियंत्रित करने में खास रुचि नहीं रखते। इसी कारण जंगल की आग अब रिहायशी इलाकों तक पहुंचने लगी है और वनाग्नि की विकरालता काफी ज्यादा बढ़ गई है।

ऐसा नहीं है कि इस समस्या का समाधान नहीं निकल सकता। इसके लिए सबसे पहले मजबूत इच्छाशक्ति की दरकार है, फिर सही दिशा में कदम बढ़ाना होगा। सबसे पहले 1980 के वन (संरक्षण) कानून के प्रावधान ठीक करने होंगे। इसमें 1,000 मीटर की ऊंचाई के ऊपर हरे पेड़ों की कटाई संबंधी प्रतिबंध तत्काल खत्म किए जाने चाहिए। विशेषकर चीड़ के संबंध में तो इसे जरूर हटाना चाहिए और ऐसा प्रावधान करना चाहिए कि चीड़ की कटाई हो सके। इसके साथ-साथ गांव बसाने की तरफ भी ध्यान देना अनिवार्य है। गांवों में आबादी को इतना जागरूक करना ही होगा कि वे पहले की तरह जंगलों का प्रबंधन अपने हाथों में ले लें।

तीसरा रास्ता है, वन विभाग को सक्रिय बनाना। पहले यह विभाग जंगलों का प्रबंधन किया करता था, फिर इस पर वन-संरक्षण की जिम्मेदारी डाल दी गई। इसको प्रबंधन का अपना कर्तव्य निभाना चाहिए। अच्छी बात है कि सरकार अपने तई कुछ प्रयास कर रही है, पर उसका खास असर नहीं पड़ रहा, इसलिए उसका बहुत फायदा नहीं दिखता। जाहिर है, हमें बुनियादी उपाय करने होंगे, तभी हम जंगलों को जलने से बचा पाएंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

कोयल सा बोलिए

व्यक्ति को क्या बोलना चाहिए और क्या नहीं, इस पर विचार किए बिना बोलने से हानि होती है। हमारे शास्त्रों ने व्यक्ति के बोलने पर भी काफी गंभीर विचार किया है। एक सुंदर उदाहरण से भी समझाया गया है कि क्या कौआ किसी से कुछ लेता है या कोयल किसी को कुछ देता है? मगर लोग कोयल की मीठी वाणी सुनकर उसके वशीभूत हो जाते हैं, जबकि कर्कश कांव-कांव सुनकर कौए को दुत्कार देते हैं।

संस्कृत में लिखी एक पंक्ति है- *वद वाक्यं शुभं सदा,* अर्थात व्यक्ति को सदा शुभ वाक्य बोलना चाहिए। महर्षि गौतम का *न्याय-दर्शन* बताता है कि व्यक्ति को बोलते समय आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि का ध्यान रखना चाहिए। संबंधित शब्दों को क्रमबद्ध बोलना 'आकांक्षा' है। पदों में निहित अर्थ का ज्ञान कराने की क्षमता को 'योग्यता' कहते हैं। वाक्य का उचित और पूर्ण अर्थ प्रकट करने के लिए पदों की एक-दूसरे से निकटता होनी चाहिए। यदि वाक्य में एक पद के उच्चारण और दूसरे पद में दूरी हो, तो उसका अर्थ प्रकट होना कठिन है, इसे 'सन्निधि' कहते हैं। याद रखिए, अशुभ बोलने से वातावरण में नकारात्मकता बढ़ती है। चौथी शती के ग्रंथ *अमरकोश* ने बुरा बोलने वालों को दुर्मुख, मुखर और अबद्धमुख कहा है। परिवार और समाज में श्रेष्ठ वही कहलाता है, जो कम व मधुर बोलता है। वाल्मीकि महर्षि के अनुसार, भगवान राम सत्यभाषी, मितभाषी (कम बोलने वाले) और पूर्वभाषी (आगे से बोलने वाले) थे।

रामायण में एक कथा आती है कि किष्किंधा में भगवान राम से जब सुग्रीव के मंत्री पवनपुत्र हनुमान मिले, तो भगवान ने उनका परिचय पूछा। ज्ञानियों में अग्रगण्य हनुमान ने जब अपना परिचय दिया, तो उसे सुनकर श्रीराम ने उनके वक्तव्य की प्रशंसा की। अनुज लक्ष्मण से उन्होंने कहा कि बाल ब्रह्मचारी हनुमान एक भी शब्द अशुद्ध नहीं बोलते। यह एक भी शब्द न तो अधिक बोलते हैं और न ही एक भी शब्द कम बोलते हैं। निश्चय ही इन्होंने अपने गुरु भगवान सूर्य से शास्त्रों, विशेषकर व्याकरण शास्त्र का गहरा अध्ययन किया है।

संस्कृत साहित्य में लिखे गए अनेक नीति श्लोकों में उन रहस्यों को सामान्य रीति में अभिव्यक्त किया गया है, जो पग-पग पर मानव का पथ-प्रदर्शन करते हैं। चाणक्य ने अपनी 'नीति' में लिखा है कि बुद्धिमान व्यक्ति को पांच प्रकार की बातों को कभी किसी के सामने प्रकट नहीं करना चाहिए- अर्थनाश (धन का डूबना), मनस्ताप (मानसिक संताप), गृह-दुश्चरित (घर में दुश्चरित्र पुरुष या स्त्री), वंचन (अपने साथ हुई ठगी) और अपमान। इनमें में किसी की भी चर्चा कहीं नहीं करनी चाहिए। व्यक्ति को धीर और गंभीरता के साथ अपनी बात कहनी चाहिए, जिससे वह प्रभाव उत्पन्न कर सके।

क्या कौआ किसी से कुछ लेता है या कोयल किसी को कुछ देता है? मगर मीठी वाणी सुनकर लोग कोयल के वशीभूत हो जाते हैं, जबकि कर्कश कौआ को दुत्कार देते हैं।

शास्त्री कोसलेंद्रदास

यह आम जनता के साथ धोखा नहीं

ब्रिटेन की अदालत में फरवरी महीने में ही एक बात कबूली गई थी, जिस पर अब देश भर में बहस हो रही है। यह विमर्श कोरोना टीके से जुड़ा हुआ है और आरोप लगाया जा रहा है कि हमारी सरकार ने जान-बूझकर आम लोगों के जीवन के साथ खिलवाड़ किया। असल में खबर यह है कि कोरोना की दवा बनाने वाली ब्रिटेन की कंपनी एस्ट्राजेनेका ने अदालत में यह स्वीकार किया है कि उसकी कोविड-19 वैक्सीन से गंभीर साइड इफेक्ट्स हो सकते हैं। यह साइड इफेक्ट थ्रोम्बोसाइटोपेनिया सिंड्रोम के रूप में हो सकता है, जिससे शरीर में खून के थक्के जमने लगते हैं। कहा जा रहा है कि पिछले कुछ महीनों में जिस तरह से अचानक हृदयगति रुक जाने से मौत की घटनाएं बढ़ी हैं, उसकी एक बड़ी वजह कोविड टीके हैं। एस्ट्राजेनेका दवा कंपनी दुनिया भर में अपना टीका कोविशील्ड और वैक्सजेवरिया के नाम से बेचती है।

मगर किसी निष्कर्ष पर पहुंचने या अपनी सरकार को घेरने से पहले हमें उस समय के हालात को जरूर ध्यान में रखना चाहिए। वह एक ऐसा वक्त था, तब शायद ही किसी को पता था कि उसके जीवन की गाड़ी किधर का रुख करेगी। चारों तरफ कोहराम मचा था और तमाम लोग कोरोना से प्रभावित हो रहे थे। महामारी का ऐसा तांडव मचा था, मानो हर घर में लोग बीमार हो रहे थे। ऐसे में, किसी भी सरकार की पहली प्राथमिकता लोगों की सुरक्षा सुनिश्चित करने की होती है। जाहिर है, हमारी सरकार ने भी ऐसा ही किया। आपात स्थिति के कारण ही कोरोना टीके को मंजूरी दी गई। तब बस एक ही मंशा थी कि अगर ये टीके कारगर साबित होते हैं, तो लाखों लोगों की जान बचाई जा सकती है और ऐसा हुआ भी। कंपनी ने ब्रिटिश अदालत में यह स्वीकार करते हुए कि उसके टीके से लोगों को दुर्लभ साइड इफेक्ट हो सकता है, यह भी कहा है कि कोविड वैक्सीन के कारण दुनिया भर में 60 लाख लोगों की जिंदगियां बचाई गईं।

आज हम भले ही कोविशील्ड की गुणवत्ता पर सवाल उठा सकते हैं, लेकिन उन दिनों, जब लोगों की जान पर बन आई थी, यह जांचने का वक्त ही कहां था कि टीके कितने सुरक्षित हैं? वैसे भी, जब एस्ट्राजेनेका ने ऑक्सफोर्ड के साथ मिलकर वैक्सीन बनाई, तब यही माना गया कि नामचीन संस्थाएं शायद ही नियमों की अनदेखी करेंगी। ऐसे में, यदि कोविशील्ड को भारत में मंजूरी मिल भी गई, तो इसमें क्या गलत हुआ? हां, अब इससे बचाव के उपाय जरूर किए जाने चाहिए। मुमकिन है कि इस दिशा में काम हो भी रहा होगा।

रोहित, टिप्पणीकार

बिना जांच टीका लगाने का नतीजा

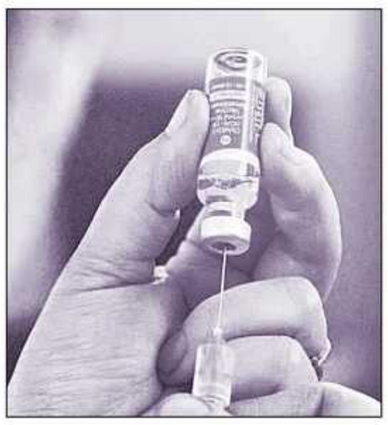

जो आशंका काफी पहले से जताई जा रही थी, अब उस पर मुहर लग ही गई। कोरोना टीके पर शुरू से संदेह किया जा रहा था और कहा जा रहा था कि बिना पुख्ता जांच के किसी भी टीके को मंजूरी नहीं दी जानी चाहिए, लेकिन उपलब्धियों का सेहरा अपने सिर बांधने की ऐसी धुन हमारे नीति-नियंताओं पर चढ़ी थी कि उन्होंने बिना यह देखे कि टीके का क्या दुष्प्रभाव हो सकता है, आनन-फानन में सभी लोगों को टीके लगाने का फरमान जारी कर दिया। इसका नतीजा अब सामने है। ब्रिटिश अदालत में एस्ट्राजेनेका ने माना है कि उसके टीके से खून के थक्के जम सकते हैं और हृदयाघात जैसी समस्याएं पैदा हो सकती हैं। अपनी गलती स्वीकार करके कंपनी बेशक चलती बने या कुछ मुआवजे देकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर ले, लेकिन इस स्वीकारोक्ति ने आम लोगों के सामने मुश्किलें जरूर खड़ी कर दी हैं। हमने पिछले कुछ महीनों से देखा ही है कि कैसे नाचते-गाते या कसरत करते लोग अचानक मौत की नींद सो गए। विवाह की वेदी तक पर ऐसी घटनाएं देखी गईं और खुशी का माहौल अचानक गम में बदलता दिखा।

परेशानी की बात यह भी रही कि जब अचानक हृदयाघात की घटनाएं सामने आ रही थीं और टीके की गुणवत्ता पर सवाल उठाए जा रहे थे, तब भी हमारे नीति-नियंताओं की नींद नहीं खुली और उन्होंने चुप रहना ही बेहतर समझा। हां, यह निर्देश जरूर जारी किया गया कि जिनको गंभीर कोरोना हुआ है, वे एक-दो साल भारी शारीरिक काम करने से बचें। क्या अच्छा नहीं होता कि वस्तु-स्थिति की जानकारी लोगों को दी जाती। जाहिर है, एस्ट्राजेनेका ने जिस तरह से सच छिपाए रखा, ठीक उसी तरह का काम हमारी सरकार ने भी किया।

यह पूरा घटनाक्रम बताता है कि हमारा तंत्र अपने नागरिकों के प्रति कितना संवेदनहीन है। एक हद तक यह माना जा सकता है कि आपात स्थिति को देखते हुए टीकाकरण की अनुमति दी गई, लेकिन यह तो समझ से परे है कि लोगों पर टीके की दो-दो, तीन-तीन खुराक लेने की शर्त क्यों थोपी गई? इतना ही नहीं, जब टीके की गुणवत्ता पर सवाल उठने लगे थे, तब भी क्यों नहीं पर्याप्त संवेदनशीलता दिखाई गई और उचित जांच-पड़ताल की गई? साफ है, हमारे नीति-नियंताओं को आम लोगों के स्वास्थ्य से कोई मतलब नहीं था। यह काफी दुखद स्थिति है। अगर अब भी हमारा तंत्र इन दुष्परिणामों के अध्ययन और निवारण में न जुटा, तो आने वाले दिनों में एक बड़ी आबादी प्रभावित हो सकती है। हमें टीके के साइड इफेक्ट का तोड़ ढूंढ़ना ही होगा।

कुणाल झा, टिप्पणीकार